अनुक्रम

क्र.सं.	खंड का नाम	पृष्ठ सं.
1.	**खंड -1भौगोलिक खोज से औद्योगिक क्रांति**	
	इकाई-1 भौगोलिक खोज एवं पुनर्जागरण	2-17
	इकाई-2 यूरोप में औद्योगिक क्रांति	18-32
	इकाई-3 यूरोप में धर्म सुधार और वाणिज्यवाद का विकास	33-52
	इकाई-4 वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उदय: प्रबोधन का युग	-
2.	**खंड -2 फ्रांसीसी क्रांति**	
	इकाई-1 पुरानी शासन व्यवस्था- राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक स्थिति	-
	इकाई-2 फ्रांस की राज्य क्रांति एवं क्रांति का स्वरूप	-
	इकाई-3 दार्शनिकों की भूमिका	-
	इकाई-4 नेपोलियन का उदय व पतन	-
3.	**खंड -3 राष्ट्रीय राज्यों का उदय**	
	इकाई-1 इटली का एकीकरण	-
	इकाई-2 जर्मनी का एकीकरण	-
	इकाई-3 विस्मार्क – विदेश नीति	-
	इकाई-4 वियना कांग्रेस, मेटरनिख व्यवस्था	53-62
4.	**खंड-4 यूरोप से इतर अन्य देशों में क्रांति एवं राष्ट्रवाद**	
	इकाई-1 अमेरिका का स्वतंत्रता संग्राम	-
	इकाई-2 आधुनिक जापान का उदय	-
	इकाई-3 रूसी क्रांति	-
	इकाई-4 रूस में नई आर्थिक नीति	-

खंड - 1 भौगोलिक खोजें एवं औद्योगिक क्रान्ति
इकाई - 1 भौगोलिक खोजें एवं पुनर्जागरण

इकाई की रूपरेखा

1.1.1 उद्देश्य
1.1.2 प्रस्तावना
1.1.3 पुनर्जागरण से अभिप्राय
1.1.3.1 पुनर्जागरण पर विद्वानों के मत
1.1.4 पुनर्जागरण के कारण
1.1.4.1 कुस्तुनतुनिया का पतन
1.1.4.2 मानववाद
1.1.4.3 आविष्कार और खोजें
1.1.5 यूरोप में पुनर्जागरण
1.1.5.1 इटली में पुनर्जागरण
1.1.5.2 इंग्लैंड में पुनर्जागरण
1.1.5.3 इटली और इंग्लैंड के पुनर्जागरण में अन्तर
1.1.6 पुनर्जागरण के प्रभाव एवं महत्व
1.1.6.1 धार्मिक आन्दोलन
1.1.6.2 भौगोलिक खोजें
1.1.6.3 औद्योगिक क्रान्ति
1.1.6.4 औपनिवेशिक साम्राज्यवाद
1.1.6.5 राष्ट्रीय भावना का विकास
1.1.6.6 कला का विकास
1.1.6.7 लोक भाषाओं का विकास
1.1.7 भौगोलिक खोजें
1.1.7.1 पुर्तगाल एवं स्पेन का योगदान
1.1.7.2 अन्य राष्ट्रों का योगदान
1.1.7.3 भौगोलिक खोजों के परिणाम
1.1.8 सारांश
1.9 बोध प्रश्न
1.1.9.1 लघुउत्तरीय प्रश्न
1.1.9.2 दीर्घउत्तरीय प्रश्न
1.1.10 संदर्भ ग्रंथ

1.1.1 उद्देश्य

पुनर्जागरण का शाब्दिक अर्थ 'पुनः जागना' अर्थात् सोई हुई अवस्था से जागना है: यूरोप के इतिहास में पुनर्जागरण का अभिप्राय साँस्कृतिक पुनर्जागरण से है। मध्य युग के अन्त और नवयुग के प्रभात का कारण यही पुनर्जागरण माना जाता है। कुस्तुन्तुनिया से जीवन की रक्षार्थ भागे हुए ईसाई विद्वानों ने यूरोप के विभिन्न नगरों में शरण ली और वहां अपने सम्पर्क में आने वाली जनता को अपने विचारों, अपनी संस्कृति और अपनी शिक्षा से प्रभावित किया जिसके कारण यूरोप में जनसाधारण के विचारों में एक क्रान्ति हुई और उन्होंने नवीन विचारों को अपनाया। नई विचारधारा ने यूरोप में नवीन सभ्यता, संस्कृति और राष्ट्रीयता आदि विविध प्रकार की भावनाओं का विकास किया। प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य यूरोप में हुए पुनर्जागरण तथा भौगोलिक खोजों की विस्तार से विवेचना करना है।

1.1.2 प्रस्तावना

पुनर्जागरण को प्रायः 'पांडित्य के पुनः उदय' का नाम भी दिया जाता है। प्राचीन काल में आर्य संस्कृति के समान यूनानी तथा लैटिन संस्कृतियाँ भी महान् समझी जाती थीं। मध्यकाल में यूनानी तथा लैटिन साहित्य को भुलाकर यूरोप की जनता अन्धविश्वासों में पड़ गयी थी, उसमें निराशा की भावना एवं उत्साहहीनता ने जन्म ले लिया था। इस पुनर्जागरण से समस्त यूरोप के विचारों में क्रांति उत्पन्न हुई। जनता का जीवन के प्रति मोह उत्पन्न हुआ। सांसारिक सुखों ने भी उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। प्रस्तुत इकाई में पुनर्जागरण का अर्थ, उसके कारणों, प्रभाव एवं महत्व तथा भौगोलिक खोजों एवं उनके महत्व का उल्लेख किया जाना प्रस्तावित है। साथ ही इकाई के अन्त में इकाई का सारांश, बोध प्रश्न एवं संदर्भ ग्रंथ सूची भी दी जावेगी।

1.1.3 पुनर्जागरण से अभिप्राय

पुनर्जागरण की कोई स्पष्ट और सहज परिभाषा नहीं दी जा सकती है। व्यापक तौर पर इसका आशय उन परिवर्तनों की प्रक्रिया से है जो मध्य युग से आधुनिक काल के मध्य यूरोप में हुए। सांस्कृतिक पुनरूत्थान का काल बहुमुखी प्रतिभा के विकास का काल था, जिसमें मानव जीवन को उद्वेलित करने के उद्देश्य से साहित्य, कला, ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में जिस बौद्धिक आन्दोलन का सूत्रपात हुआ, उसे 'पुनर्जागरण' कहते हैं। नवयुग के अवतरण की सूचना देने वाला तथ्य पुनर्जारण था, जिसका प्रभाव इंग्लैण्ड पर सर्वप्रथम हेनरी सप्तम के समय में पड़ा। 'रेनेसाँ' (Renaissance) शब्द फ्रांसीसी भाषा का है, जिसका अर्थ पुनर्जन्म अथवा पुनर्जागरण होता है। पुनर्जागरण को प्रायः 'पांडित्य के पुनः उदय' का नाम भी दिया जाता है।

इस काल में तर्क और ज्ञान के आधार पर मानव जीवन का सही मूल्यांकन किया गया। इसी काल में यूरोप के विकास की नींव पड़ी और विचारों एवं चिन्तन के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। मनुष्य में परम्परा के प्रति अरूचि और बौद्धिकता के प्रति आस्था उत्पन्न हुई। इस प्रकार यूरोप में बुद्धिवाद का जोर बढ़ने लगा। लोगों में विचार-स्वातंत्र्य की भावना का विकास हुआ और उनकी चिन्तन-शक्ति को नयी दिशा प्राप्त हुई। अब वे अपनी बुद्धि से नवीन प्रयोग करने के लिए प्रेरित हुए। इस कारण लोगों में प्राचीन परम्पराओं के प्रति उपेक्षा की भावना उत्पन्न होने लगी। अब वे हर बात को बुद्धि की कसौटी पर कसने लगे तथा उन्हें जो उचित लगता, उसे ही अपनाने लगे और मानव मस्तिष्क उद्वेलित होकर प्रचलित संस्थाओं की बुराइयों को

चुनौती देने लगा। लोगों के विचारों में यह परिवर्तन यूरोप के भावी विकास का सूचक था। इसी समय यूरोप में शहरों का विकास तथा राष्ट्रीयता की भावना का अभ्युदय हुआ। नगरों के विकास ने पुनर्जागरण की प्रक्रिया को अत्यधिक प्रोत्साहित किया। नगर में विकसित होने वाला नया समाज मध्यम वर्ग के नाम से प्रसिद्ध हुआ, जो नवीन संस्कृति एवं वैभव से सम्पन्न था। इसने आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में नया परिवर्तन किया, जिसने मध्यकालीन सामन्तीय व्यवस्था को समाप्त कर दिया। पुनर्जागरण ने मध्ययुगीन आडम्बरों, अन्धविश्वासों एवं प्रथाओं को समाप्त किया तथा उसके स्थान पर व्यक्तिवाद, भौतिकवाद, स्वतन्त्रता की भावना, उन्नत आर्थिक व्यवस्था एवं राष्ट्रवाद को प्रतिस्थापित किया। यूरोपीय इतिहास के संदर्भ में पुनर्जागरण काल लगभग 14वीं सदी से 16वीं सदी तथा विशेष रूप से 1350 ई. से 1550 ई. के मध्य माना जाता है।

1.1.3.1 पुनर्जागरण पर विद्वानों के मत

सामान्यतः आधुनिक यूरोप का आरंभ पुनर्जागरण से ही माना जाता है क्योंकि पुनर्जागरण ने यूरोप में विचार करने की स्वतंत्रता, वैज्ञानिक एवं आलोचनात्मक दृष्टि, चर्च के प्रभुत्व से कला एवं साहित्य की मुक्ति तथा प्रादेशिक भाषाओं के विकास को संभव बनाया। पुनर्जागरण के सम्बन्ध में प्रमुख इतिहासकारों के मत निम्नलिखित हैं -

फर्गूसन तथा ब्रून ने लिखा है - 'पुनर्जागरण का युग महत्वपूर्ण परिवर्तनों का युग था जिसमें बहुत कुछ मध्यकालीन था, कुछ स्पष्टतः आधुनिक था तथा कुछ स्वयं में विशिष्ट था। इसने मध्य एवं आधुनिक युगों के बीच के रिक्त स्थान को पाट दिया, परन्तु इसके साथ ही यह महान् राजनीतिक, सामाजिक एवं बौद्धिक जागृति का सांस्कृतिक काल था।

राबर्ट इरगैंग के अनुसार, ''सांस्कृतिक पुनरूत्थान के द्वारा सामन्तशाही का पतन, प्राचीन साहित्य का अध्ययन, बारूद और छापेखाने का आविष्कार, नये मार्गों की खोज, पूँजीवाद का आरंभ इत्यादि कार्य सम्पन्न हुए।'' सीमित रूप में इसका अभिप्राय जिन विशेष सांस्कृतिक परिवर्तनों से है, वे इस प्रकार हैं - लौकिक भावना की वृद्धि, सांसारिक वस्तुओं के प्रति रूचि, साहित्य और कला के क्षेत्र में नवीन भावना का विकास आदि।

फिशर के अनुसार, ''मानववादी आन्दोलन का आरंभ, धर्म के क्षेत्र में नया दृष्टिकोण, स्थापत्य एवं चित्रकला का नया स्वरूप, व्यक्तिवादी सिद्धान्तों का विकास, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और छापेखाने का आविष्कार इत्यादि विशेषताओं को सामूहिक रूप में 'सांस्कृतिक नवजागरण' कहते हैं।''

इतिहासकार डेविस के शब्दों में पुनर्जागरण शब्द '' मानव के स्वातंत्र प्रिय साहसी विचारों को जो मध्य युग में धर्माधिकारियों द्वारा जकड़ व बन्दी बना दिये गये थे, व्यक्त करता है।''

इतिहासकार सीमोण्ड ने लिखा है कि '' यह एक आन्दोलन था जिसके द्वारा पश्चिम के राष्ट्र मध्य युग से निकल कर आधुनिक विचार तथा जीवन की पद्धतियों को ग्रहण करने लगे।

1.1.4 पुनर्जागरण के कारण

पुनर्जागरण की प्रक्रिया प्राचीन साहित्य के अध्ययन एवं मनन के फलस्वरूप प्रकट हुई। यूनान और रोम के विद्वानों ने प्राचीन साहित्य का अध्ययन कर उसकी महत्ता से लोगों को अवगत कराया। नगरों के निवासियों ने अनुकूल साहित्य के अभाव में अपने भौतिक जीवन के समर्थन हेतु प्राचीन साहित्य का सहारा

लिया। लोग प्राचीन साहित्य की ओर आकृष्ट हुए, जिससे वे जीवन के नवीन दृष्टिकोण को समझ सकें। इसके कारण उन्हें नवीन, व्यापक और स्वतंत्र दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। फलतः अब व्यक्ति की महत्ता बढ़ने लगी। सांस्कृतिक पुनरूत्थान का आरंभ सर्वप्रथम इटली में हुआ, क्योंकि इटली में ही प्राचीन सभ्यता के अवशेष थे। इस सुविधा के कारण वहाँ के निवासियों ने प्राचीन यूनानी और रोमन साहित्य एवं संस्कृति का अध्ययन आरंभ किया। कालान्तर में समस्त यूरोपीय देशों पर इसका प्रभाव पड़ा। पुनर्जागरण के कारण निम्नलिखित हैं-

1.1.4.1 कुस्तुन्तुनिया का पतन

यूरोप के पुनर्जागरण के इतिहास में कुस्तुन्तुनिया के मार्ग का अपना एक विशेष महत्व था। व्यापारिक दृष्टि से इस मार्ग की उपयोगिता अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। यह मार्ग एशिया और यूरोप महाद्वीपों को जोड़ने की एक महत्वपूर्ण कड़ी था। मध्य युग में कुस्तुन्तुनिया यूरोपीय व्यापार , संस्कृति एवं विद्या का केन्द्र था। अतः यूरोप के आधुनिक विकास का कार्य कुस्तुन्तुनिया के भाग्य के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ था।

सन् 1453 ई. में कुस्तुन्तुनिया के मार्ग पर तुर्कों ने अपना अधिकार स्थापित किया , जिसके कारण पश्चिमी देशों का पूर्वी देशों से व्यापार समाप्त हो गया। लोगों के समक्ष अब कोई अन्य मार्ग ढूँढ़ने की समस्या उत्पन्न हुई। आक्रमणकारी तुर्कों के विरूद्ध पोप की अध्यक्षता में धर्म-युद्ध के फलस्वरूप यूरोप के निवासियों की जीवन शैली और भौगोलिक ज्ञान में भारी वृद्धि हुई। इस घटना ने पुनर्जागरण के कार्य और भौगोलिक अनुसंधान की प्रक्रिया को अत्याधिक प्रभावित किया। तुर्कों के आक्रमण से भयभीत होकर यूनानी विद्वान बड़ी संख्या में इटली चले गये, जहाँ वे प्राचीन विद्या और साहित्य के अध्ययन के कार्य में जुट गये। इस प्रकार इन विद्वानों के सहयोग से पुनर्जागरण का कार्य बड़ी तीव्रता से प्रारंभ हुआ।

1.1.4.2 मानववाद

पुनर्जागरण ने यूरोपीय विद्वानों में प्राचीन साहित्य और विद्या के प्रति अभिरूचि उत्पन्न की और लोग उसे बड़ी रूचि के साथ पढ़ने लगे तथा आदर्श-रूप में उसे ग्रहण करने लगे। लोगों की इस प्रवृत्ति ने यूरोपीय साहित्य और विविध कलाओं की शैली को प्रभावित किया। इसके कारण यूरोप के विद्वानों में मानववाद का जन्म हुआ। मानववाद का तात्पर्य उस 'उन्नत ज्ञान' से है, जिसमें मानवता, माधुर्य और जीवन की वास्तविकता निहित है, जिसके सामने आध्यात्मिकता एवं धर्म-शास्त्र की महत्ता गौण है। इस तरह जिन विद्वानों ने प्राचीन साहित्य का अध्ययन कर मानववादी सिद्धान्तों पर जोर दिया, उन्हें मानववादी कहा जाने लगा। इन्हें समाज के प्रमुख, धन-सम्पन्न और विद्या-प्रेमी लोगों का सहयोग, संरक्षण तथा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। मानववादी आन्दोलन ने लोगों में बौद्धिक उत्सुकता, तार्किकता और ज्ञान-पिपासा की भावनाओं को जन्म दिया। इस आन्दोलन ने यूरोप के समस्त बौद्धिक वातावरण को व्यापक रूप से प्रभावित किया।

1.1.4.3 आविष्कार एवं खोजें

पुनर्जागरण के विकास में तत्कालीन अविष्कारों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। यहाँ उल्लेख करना आवश्यक होगा कि मंगोलों के सम्पर्क से यूरोप को कागज, कुतुबनुमा तथा बारूद की जानकारी मिली। इस काल में हुए आविष्कार एवं खोजें निम्नलिखित थीं -

1.1.4.3.1 छापाखाना

1453 ई. से पूर्व आविष्कारों के अभाव में पुनर्जागरण इतना सफल नहीं हो सका था जितना कि तत्पश्चात् हुआ। इन आविष्कारों में अत्यन्त महत्वपूर्ण आविष्कार छापाखाने का था। 1460 ई. में जर्मन व्यक्ति जोहन्नेस गुटनबर्ग ने सर्वप्रथम एक ऐसी टाइप मशीन का आविष्कार जर्मनी में किया जो आधुनिक प्रेस की

पूर्ववर्ती कही जा सकती है। 1477 ई. में केक्सटन ने इंग्लैण्ड में छापेखाने के प्रयोग को प्रचलित किया। मुद्रण यंत्र के आविष्कार ने बौद्धिक विकास का मार्ग खोल दिया। छापेखाने से विद्या-सागर में अत्यन्त सहायता मिली, क्योंकि इससे पुस्तकों का अभाव दूर हो गया। इससे पूर्व पुस्तकों को हाथ से ही लिखना पड़ता था। अतः पुस्तकों की संख्या कम ही रहती थी तथा उनका मूल्य बहुत अधिक होता था। अतः पुनर्जागरण के उत्थान में छापेखाने की प्रमुख भूमिका रही।

1.4.3.2 कागज

आधुनिक युग से पूर्व जानवरों की खालों तथा पेड़ की छालों का प्रयोग लिखने के लिए करना पड़ता था, किन्तु अब, एक प्रकार की विशिष्ट घास की खोज की गयी जिससे कागज बनाया जाने लगा जो कि खाल की तुलना में अत्यन्त सस्ता था। मध्य युग मे अरबों के माध्यम से यूरोप वासियों ने कागज बनाने की कला सीखी। अतः छापेखाने एवं कागज के आविष्कार ने पुनर्जागरण के प्रचार एवं प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

1.4.3.3 बारूद

बारूद का प्रचलन यूरोप में पहले से ही था, किन्तु इस समय बारूद का प्रयोग तोप तथा बन्दूक के द्वारा होने लगा, जिससे इंग्लैण्ड के राजाओं ने शक्तिशाली सेना तैयार कर सामन्तों की शक्ति का दमन किया तथा देश में राजनीतिक चेतना का प्रसार किया तथा पुनर्जागरण को बल प्राप्त हुआ।

1.4.3.4 कुतुबनुमा

कुतुबनुमा का आविष्कार चीन में हुआ था। इटली का प्रसिद्ध यात्री मार्कोपोलो जो 24 वर्षों तक मंगोलिया में राज्यपाल के रूप में रहा था उसने कुतुबनुमा की सहायता से दूर-दूर देशों की यात्रायें एवं व्यापार किया तथा अपनी यात्राओं का विवरण भी लिखा जिसे आज इतिहास का स्त्रोत माना जाता है। तत्पश्चात कुतुबनुमा का प्रयोग यूरोप में भी प्रारम्भ हो गया जिसने सामुद्रिक यात्रा को सरल बना दिया, जिसके परिणामस्वरूप व्यापार के अतिरिक्त नवीन विचारों का आदान-प्रदान भी सम्भव हो सका।

1.4.3.5 भौगोलिक खोजें

कुतुबनुमा के आविष्कार तथा उसकी यात्राओं के विषय में जानकर अनेक व्यक्तियों में यात्रा करने का उत्साह संचारित हुआ। कोलम्बस, वास्कोडिगामा आदि ने दूर-दूर तक यात्रायें कर अनुभव प्राप्त किया तथा नवीन ज्ञान एवं विचारों के प्रसारण में सहायता दी। अतः भौगोलिक खोजें भी पुनर्जागरण हेतु उत्तरदायी रहीं।

1.4.3.6 अरबी अंक

यूरोप में पहले रोमन अंकों (I, II, III, IV, V) का प्रयोग होता था, किन्तु अरबों के सम्पर्क में आने से अब अरबी अंकों (1, 2, 3, 4, 5) का प्रयोग होने लगा जिससे गुणा-भाग आदि करना सरल हो गया।

उपर्युक्त समस्त कारणों के अतिरिक्त इंग्लैण्ड में मध्ययुग में कुछ ऐसी घटनाएँ हुई जिनके कारण जनता ने मध्यकालीन विचारों को त्यागकर आधुनिक विचारधारा को स्वीकार किया। ये प्रभावशाली घटनाएँ - अकाल, सौ वर्षीय युद्ध, किसानों का विद्रोह तथा गुलाब के फूलों का युद्ध थीं। इन घटनाओं ने इंग्लैण्ड में जमींदारी-प्रथा, सामन्तीय-व्यवस्था तथा अन्य मध्ययुगीन कुप्रथाओं को समाप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान किया तथा पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त किया।

1.1.5 यूरोप में पुनर्जागरण

यूरोप में पुनर्जागरण इटली से प्रारम्भ हुआ जो कि एक धनी देश था। तत्पश्चात् इसकी लहर यूरोप में तीव्र गति से फैली। इटली तथा इंग्लैण्ड में इसका विशेष रूप से प्रभाव पड़ा।

1.1.5.1 इटली में पुनर्जागरण

क्रूर तुर्कों द्वारा कुस्तुन्तुनियाँ पर अधिकार करने तथा यूनानियों पर अमानुषिक अत्याचार के परिणामस्वरूप कुस्तुन्तुनियाँ से बहुत से व्यक्ति भागने पर विवश हुए। ये लोग भाग कर इटली में बसने लगे, जहाँ उनका सम्मान किया गया, क्योंकि कुस्तुन्तुनियाँ यूनानियों का शिक्षा का केन्द्र तथा वहाँ का साहित्य, कला, ज्योतिष, विद्या एवं आध्यात्मिक ज्ञान यूरोप में सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे। इटली यूरोप का एक धनी देश था। अतः यूनानियों को वहाँ बसने तथा अपने विचारों का प्रचार करने में सहायता मिली। लैटिन तथा यूनानी भाषा के अनेक विद्यालय खोले गये तथा यूनानियों की अनेक पुस्तकों का अनुवाद लैटिन भाषा में किया गया।

दान्ते (1265-1321 ई.), इटली का एक प्रसिद्ध कवि था जिसकी यूनानी एवं लैटिन साहित्य में विशेष रुचि थी। अपनी विश्व-प्रसिद्ध कविता 'डिवाइन कामेडी' में उसने यूनानी साहित्य के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है।

पेट्रार्क (1304-1374 ई.) इटली का एक प्रसिद्ध विद्वान था। उसने सम्पूर्ण इटली, फ्रांस तथा अनेक देशों की यात्राएँ कर यूनानी तथा लैटिन पुस्तकों की हस्तलिपियाँ एकत्रित कीं और उनकी अनेक प्रतियाँ तैयार करवायीं।

बोकैशियो (1313-1375 ई.), ये पेट्रार्क का शिष्य था। इसने यूनानी भाषा की प्रमुख पुस्तकें ईलियड तथा औडेसी को खोजकर उनका अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त उसने डीकैमेरन नामक पुस्तक की रचना की जिससे चॉसर भी अत्यधिक प्रभावित हुआ था और उसकी विचारधारा इसी पुस्तक पर आधारित थी।

इन विद्वानों के कार्यों ने इटली में जनता को आकर्षित किया था। इसी समय यूनानी विद्वानों के इटली में आकर बसने से भी यूनानी तथा लैटिन साहित्य की प्रगति में तीव्रता आ गयी। इस प्रकार इटली यूरोप में शिक्षा का केन्द्र बन गया।

इटली में दो राज्यों में विशेष रूप से उन्नति हुई थी। ये राज्य थे - फ्लोरेंस तथा रोम। कुस्तुन्तुनियाँ से भागे हुए यूनानियों ने फ्लोरेंस में बड़ी संख्या में बसना प्रारम्भ किया था। यूनानियों के प्रयत्न से वहाँ विद्यालयों की स्थापना की गयी। क्रिसोलोर्स ने फ्लोरेंस विश्वविद्यालय में यूनानी साहित्य पर व्याख्यान देने प्रारम्भ किये तथा अन्य विश्वविद्यालयों में भी यूनानी भाषा की शिक्षा दी। क्रिसोलोर्स ने यूनानी भाषा का व्याकरण तैयार किया जिससे यूनानी भाषा का अध्ययन सुगम हो गया। मेडिसी वंश के शासकों ने यूनानी भाषा की उन्नति के लिए प्रयत्न किए तथा फ्लोरेंस में एक पुस्तकालय की स्थापना करवायी। लोरेन्जो-डी-मेडिसी ने कई यूनानी विद्वानों को आश्रय दिया तथा दो सौ से अधिक पुस्तकें मेडिसी पुस्तकालय में एकत्रित कीं। लिओनार्दो अत्यन्त विद्या-प्रेमी था। वह प्रतिवर्ष साठ हजार पौंड पुस्तकों पर व्यय करता था। इस प्रकार उसके प्रयत्नों से फ्लोरेंस शिक्षा का एक महान् केन्द्र बन गया।

फ्लोरेंस के अतिरिक्त रोम भी इस समय शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र बन गया था। फ्लोरेंस के समान रोम में भी अनेक यूनानी विद्वानों ने आकर शरण ली थी। रोम में इन विद्वानों को पोप निकोलस पंचम ने संरक्षण प्रदान किया। फ्लोरेंस के समान रोम में भी एक पुस्तकालय की स्थापना की गयी जिसका श्रेय

तत्कालीन पोप को है। इस पुस्तकालय का नाम वेटिकन रखा गया। लिओ दसवाँ भी विद्या-प्रेमी था। उसने रोम के विश्वविद्यालय में सौ अध्यापकों की नियुक्ति की। वह रोम को विश्व की राजधानी मानता था, क्योंकि उसका विचार था कि साहित्यिक क्षेत्र में विश्व का कोई भी नगर रोम की बराबरी नहीं कर सकता है।

इटली तथा यूनानी विद्वानों की विद्वत्ता उनको राजकीय एवं पोप से संरक्षण एवं उनके प्रयत्नों के परिणामस्वरूप पुनर्जागरण की लहर तीव्र गति से फैली। इसी कारण इटली में प्रचलित था कि 'यूनान का पतन नहीं हुआ वरन् उसका इटली में देशान्तरण हो गया है।'

1.1.5.2 इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण

यद्यपि इटली में हुए पुनर्जागरण का प्रभाव इंग्लैण्ड में एडवर्ड चतुर्थ के राज्यकाल में प्रकट होने लगा था, परन्तु हेनरी सप्तम के समय में पुनर्जागरण ने अपनी जड़ों को मजबूत बनाया। इंग्लैण्ड में उस समय दो प्रसिद्ध विश्वविद्यालय, ऑक्सफोर्ड तथा केम्ब्रिज थे। ये विश्वविद्यालय ही इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण के केन्द्र बने। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के कुछ छात्र इटली अध्ययन हेतु गये। 1465 ई. में विलियम सैलिंग प्रथम व्यक्ति था जिसने यूनानी लिपि का अध्ययन किया। सैलिंग का शिष्य थॉमस लिनेकर भी इटली गया तथा यूनानी भाषा के अध्ययन के साथ-साथ उसने ज्ञान की प्रत्येक शाखा का अध्ययन किया। उसने अपनी विशिष्ट रुचि औषधि-विज्ञान में प्रदर्शित की तथा चिकित्सक बनकर वह वापस इंग्लैण्ड आया। शीघ्र ही लिनेकर ट्यूडर शासकों का राजकीय चिकित्सक नियुक्त हो गया। लिनेकर ने लन्दन में चिकित्सकों का एक विद्यालय स्थापित किया। इसके अतिरिक्त यूनानी साहित्य के विद्वान् ग्रोसिन तथा लाइनाक्रे भी इटली गये तथा लौटकर विश्वविद्यालयों में यूनानी साहित्य पर व्याख्यान देने लगे। इनके अतिरिक्त कुछ विद्वान् जिन्होंने पुनर्जागरण के लिए कार्य किया इस प्रकार थे - जॉन कोलेट लन्दन के अमीर व्यापारी का पुत्र था। अध्ययन करने के लिए वह इटली गया तथा महान् आलोचक बनकर 1497 ई. में इंग्लैण्ड लौटा। वह सेन्टपॉल विद्यालय में अध्यापक बन गया तथा पोप एवं पादरियों की कटु आलोचना की। उसने अपने व्याख्यानों में परम्परागत विचारों के मूल में जाने का प्रयास किया। उसने अनेक विद्यालयों की भी स्थापना की जिनसे नवीन विचारों के प्रसारण में सहायता मिली। इरैस्मस एक फ्रांसीसी विद्वान था तथा अपने समय के प्रकाण्ड पण्डितों में से एक था। इरैस्मस ने भी इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण को गति प्रदान की। इरैस्मस ब्रह्मज्ञान के विद्वान् के रूप में ऑक्सफोर्ड विश्व-विद्यालय में कार्यरत था। उसके व्याख्यानों ने जनता में क्रांति उत्पन्न कर दी। छापेखाने के द्वारा सम्पूर्ण यूरोप में प्रसिद्धि प्राप्त करने वाला वह प्रथम व्यक्ति था। उसने एक पुस्तक 'प्रेज ऑफ फौली' की रचना की जिसमें उसने चर्च की बुराइयों का वर्णन किया। अपनी एक अन्य रचना 'ग्रीक टेस्टामेन्ट' में भी इरैस्मस ने पोप तथा चर्च की आलोचना की तथा धार्मिक रूढ़िवादिता पर गहरा आघात किया।

इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण को सर्वाधित शक्ति प्रदान करने वाला व्यक्ति टॉमस मूर था। टॉमस मूर, कालेट तथा इरैस्मस का मित्र था। टॉमस मूर ने राजनीति के क्षेत्र में मुक्त आलोचना की तथा नयी चेतना का प्रयोग किया एवं 1516 ई. में प्रकाशित अपनी कृति 'Utopia' में एक ऐसे समाज का चित्र खींचा जिसमें संपत्ति का अच्छा फैलाव था, प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित था, कोई निर्धन अथवा पीड़ित न था। कोई क्रूर मालिक न था। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार ईश्वर की आराधना का अधिकार था। इस चित्र का स्थान उसने अज्ञात नयी दुनिया बताया। यह पुस्तक इंग्लैण्ड के धनी वर्ग एवं चर्च पर व्यंग्य था। जनता पर इस पुस्तक का व्यापक प्रभाव पड़ा। इस पुस्तक ने जनता को तत्कालीन इंग्लैण्ड में व्याप्त बुराइयों के विषय में सोचने पर बाध्य किया

तथा आधुनिक युग के समाज का आदर्श प्रस्तुत किया। रैम्जे म्योर के शब्दों में – 'यूटोपिया एक पवित्र प्रजातन्त्र है जहाँ व्यवहारतः न तो कोई सरकार है, न कर-व्यवस्था है और न कोई अपराध ही होता है।'

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के समान ही कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों के विद्वानों ने भी पुनर्जागरण का प्रसार किया। इन विद्वानों ने, जिनमें रिचर्ड क्रोक, थामस स्माइट, चेके तथा गजा प्रमुख हैं, अनेक पुस्तकों की रचनाएँ कीं तथा अन्य साहित्यिक कार्य कर पुनर्जागरण को शक्ति प्रदान की।

इन विद्वानों के अतिरिक्त पुनर्जागरण की सफलता का श्रेय ट्यूडर शासकों को भी है। हेनरी सप्तम एवं हेनरी अष्टम ने अपना सम्पूर्ण सहयोग पुनर्जागरण की प्रगति के लिए दिया। महारानी एलिजाबेथ के शासनकाल में पुनर्जागरण अपनी सफलता की चरम सीमा तक पहुँच गया। उसके शासनकाल में विशिष्ट सांस्कृतिक उन्नति इस बात का द्योतक है।

1.1.5.3 इटली तथा इंग्लैण्ड के पुनर्जागरण में अन्तर

इटली तथा इंग्लैण्ड के पुनर्जागरण के नेताओं में पर्याप्त मतैक्य था। इटली के नेताओं ने धर्मशास्त्र में रुचि नहीं ली। उन्होंने इसे समाप्त होने वाले युग का अंधविश्वास समझकर ठुकरा दिया तथा मैकियावेली जैसे राजनीतिक चिन्तक जिसकी 'द प्रिंस' नामक पुस्तक 1509 ई. में प्रकाशित हुई थी ने किसी काल्पनिक आदर्श राज्य का सपना नहीं देखा वरन् युद्ध और कपट के जिन साधनों से सत्ता प्राप्त की जा सकती है तथा प्राप्त सत्ता की रक्षा की जा सकती है, उसका अत्यन्त व्यावहारिक अध्ययन किया, किन्तु इंग्लैण्ड में आलोचना के प्रमुख विषय चर्च के भ्रष्टाचार, अंधविश्वास तथा राज्य की क्रूरता थे। अतः पुनर्जागरण ने जो कार्य इटली में नहीं किया उसे इंग्लैण्ड में किया। इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण ने धर्म -सुधार का रास्ता तैयार किया।

1.1.6 पुनर्जागरण के प्रभाव एवं महत्व

सर्वमान्य है कि पुनर्जागरण एक साहित्यिक क्रांति थी, किन्तु यह उचित नहीं है। पुनर्जागरण ने जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित किया। मानव जीवन की श्रेष्ठता एवं उसका महत्व बढ़ गया। लोग आशावादी होने लगे। भौतिक सुखों एवं मनोरंजनों को भी मानव जीवन के लिए परम आवश्यक माना गया। तत्कालीन कला एवं साहित्य ने मानव जीवन की कठिनाइयों तथा उनके दूर करने के उपायों को प्रस्तुत किया। गरीब व्यक्तियों की ओर जनता तथा सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ। लोगों में मनुष्यता की भावना ने जन्म लिया। पुनर्जागरण के प्रभाव एवं महत्व निम्नानुसार समझा जासकता है -

1.1.6.1 धार्मिक आन्दोलन

धार्मिक क्षेत्र में पुनर्जागरण का महत्व आडम्बरों को त्याग कर सरल और धार्मिक नियमों का पालन करने में था। इससे जन-साधारण में फैले अन्धविश्वास और हानिकारक धार्मिक परम्पराओं की समाप्ति हो गई। मध्यकालीन यूरोप में चर्च सबसे अधिक प्रभावपूर्ण संस्था थी। यूरोप की जनता चर्च के अधिष्ठाता पोप में अपार श्रद्धा रखते हुए उसके आदेशों का पालन इस प्रकार करती थी मानों वे आदेश ईश्वरीय आदेश हों। इस प्रकार पोप का प्रभाव सम्पूर्ण यूरोप में शासकों और सम्राटों से अधिक फैला हुआ था। पादरी वर्ग जनता से उसके आदेशों का पालन कराता था। परन्तु पुनर्जागरण काल में नवीन विचारों के प्रसार ने जन-साधारण में आलोचना की शक्ति उत्पन्न की और वे धार्मिक आदेशों का अन्धानुकरण नहीं करके उनकी परीक्षा करने लगे। इसमें पोप का प्रभाव समाप्त होने लगा जनता का यही कार्य धर्म सुधार के नाम से प्रसिद्ध है। इसके प्रभाव से धर्म में व्यापक और मौलिक सुधार किये जाने लगे तथा सभी देशों में राष्ट्रीय चर्च की स्थापना की जाने

लगी। फिशर ने इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि ''यूरोप में ऐसे समय नवीन ज्ञान ने राष्ट्रीयता के विचारों और स्वतन्त्रता की भावना से युक्त शितिज पर प्रोटेस्टेण्ट धर्म सुधार की ज्योति उत्पन्न की।'' हेज के अनुसार-''पुनर्जागरण काल में चर्च की बुराइयाँ यूरोपीय जनता के समक्ष प्रकट होने लगी और उनका धर्म सुधार के प्रति आकर्षण बढने लगा।'' प्रसिद्ध इतिहासकार स्टब के अनुसार ''इटली में घटित पुनर्जागरण ने सभी के सम्मुख विद्वानों की समिति को लाने का श्रेय प्राप्त किया। उस समिति ने धर्म सुधार की भावना को ग्रहण करने के लिये यूरोपीय जनता में योग्यता करने का प्रयास किया।'' इस प्रकार कहा जा सकता है कि पुनर्जागरण काल ने यूरोपीय जनता के मस्तिष्क से मध्य युग के राज्य, समाज, प्रकृति, कला और दर्शन का प्रभाव समाप्त करके उन्हें नवीन ज्ञान, विज्ञान, कला और दर्शन से परिचित कराया। इसीलिये पुनर्जागरण काल को मध्य युग के अन्त और नवयुग के आरम्भ का सन्धि काल भी स्वीकार किया जाता है।

मध्यकालीन यूरोप में धर्म की प्रधानता थी, जिसके कारण वहाँ अंधविश्वास, रूढ़िवादिता एवं कूपमण्डूकता की प्रधानता थी। चर्च के सिद्धान्तों के प्रति लोगों की दृढ़ आस्था थी, जिसकी अवहेलना करना वे घोर पाप समझते थे। चर्च की शक्ति बड़ी विशाल और संगठित थी तथा राज्य की तुलना में उसका स्थान ऊँचा था।

चर्च की इस महत्ता पर सर्वप्रथम पुनर्जागरण ने आघात पहुँचाया। पुनर्जागरण ने तर्क और बुद्धि-प्रयोग पर बल दिया, जिसके कारण धार्मिक विश्वासों की जड़ें हिलने लगीं। इस परिवर्तित स्थिति ने लोगों को चर्च के नियंत्रण से मुक्त कर स्वतंत्रतापूर्वक सोचने के लिए प्रेरित किया। फलस्वरूप चर्च के सिद्धान्तों पर आक्षेप होने लगे। विचार-स्वातंत्र्य और नवजागरण के कारण अब विचारशील लोगों के लिये चर्च के सिद्धान्तों को चुपचाप स्वीकार करना असंभव हो गया। वास्तव में लोगों की यह प्रवृत्ति आधुनिक युग के आगमन की सूचक थी। मार्टिन लूथर द्वारा जर्मन-भाषा में बाइबिल का अनुवाद धर्म-सुधार आन्दोलन के लिये महत्वपूर्ण प्रेरक तत्व सिद्ध हुआ।

1.1.6.2 भौगोलिक खोजें

कुस्तुन्तुनिया के मार्ग के अवरूद्ध होने से यूरोप में भौगोलिक खोजों का कार्य अनिवार्य हो गया। इस कार्य का नेतृत्व स्पेन और पुर्तगाल ने किया, जिनके संरक्षण में अनेक साहसी नाविकों व व्यक्तियों ने नवीन स्थानों को ढूँढ़ निकाला। सन् 1492 ई. में स्पेन के संरक्षण में बहामा द्वीप को ढूँढ़ निकाला गया। सन् 1498 ई. में पुर्तगाल के वास्कोडिगामा ने भारतीय समुद्र-तट को ढूँढ़ निकालने में सफलता प्राप्त की।

स्पेन और पुर्तगाल की इन सफलताओं ने दूसरे यूरोपीय देशों को भी खोज के कार्य के लिए प्रेरित किया। फलस्वरूप अब व्यापक रूप से नवीन मार्गों को ढूँढने का कार्य होने लगा। सन् 1497 ई. में जॉन कैवट नामक वेनिस के यात्री ने केप ब्रिटेन द्वीप का पता लगाया। सन् 1499 ई. में पिंजो ने ब्राजील को ढूँढ़ निकाला। पश्चिमी गोलार्ध का नामकरण भी इसी समय हुआ और एक व्यापारी अमेरिगो के नाम पर उसका नाम अमेरिका पड़ा। इन खोजों के कारण विश्व का आकार विस्तृत हो गया, जिसने यूरोप के लिए अपार धन राशि प्राप्त करने का मार्ग प्रस्तुत कर दिया। अब यूरोपीय देशों के व्यापार और कला-कौशल में पर्याप्त रूप से वृद्धि होने लगी। साथ ही, धर्म-प्रचार और प्रसार के लिये भी नवीन क्षेत्र उपलब्ध हुए।

1.1.6.3 औद्योगिक क्रान्ति

यूरोप में भौगोलिक खोजों के कारण लोगों के समक्ष व्यापक क्षेत्र प्रस्तुत हुए, जहाँ वे धर्म-सुधार, साम्राज्य-विस्तार और व्यापार का कार्य करने लगे। नवीन देशों के साथ सम्बन्ध स्थापित होने के कारण उनसे

विद्या और विज्ञान का परस्पर आदान-प्रदान संभव हुआ। उनसे व्यापारिक सम्बन्धों की स्थापना के कारण यूरोप के आर्थिक विकास का मार्ग भी प्रशस्त होता गया।

नवीन मार्ग, क्षेत्र, साधन और व्यापारिक वस्तुओं की उपलब्धि ने आर्थिक क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी हलचल उत्पन्न कर दी, जिसे हम औद्योगिक क्रान्ति की संज्ञा देते हैं। इस कारण यूरोप की मध्यकालीन व्यापारिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन आ गया और उसका स्वरूप अत्यंत विकसित हो गया। अब व्यापार के संचालन में बड़ी पूँजी की आवश्यकता पड़ने लगी। फलस्वरूप नवीन व्यापारिक कम्पनियों और मुद्रा नियंत्रण के लिये बैंकों की स्थापना हुई। व्यापारिक क्षेत्र में इस परिवर्तन ने कच्चे माल की आवश्यकता तथा निर्मित वस्तुओं की ब्रिकी के लिए बाजारों की आवश्यकताओं को जरूरी बना दिया। अतः यूरोपीय राज्यों में उक्त दोनों लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये आपसी संघर्ष होने लगे। अब यूरोपीय देश बाजारों की खोज के लिये उपनिवेशों की स्थापना को प्राथमिकता देने लगे।

1.1.6.4 औपनिवेशिक साम्राज्यवाद

यूरोपीय राज्यों के बीच संघर्ष ने औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की प्रक्रिया को जन्म दिया। फलतः यूरोप के विभिन्न राज्य, जैसे - स्पेन, पुर्तगाल, इंग्लैण्ड और फ्रांस विभिन्न क्षेत्रों में साम्राज्य विस्तार का कार्य करने लगे। यूरोपीय राज्यों की साम्राज्य स्थापना की इस प्रक्रिया को साम्राज्यवाद की संज्ञा दी गयी। फ्रांस ने कनाडा में और इंग्लैण्ड ने अमेरिका में अपना प्रभाव-क्षेत्र स्थापित कर लिया।

साम्राज्यवाद ने यूरोप की राजनीति में एक नये सिद्धान्त को जन्म दिया, जिसे 'शक्ति-संतुलन' का सिद्धान्त कहते हैं। इस सिद्धान्त के परिपालन के लिये यूरोपीय राज्यों के बीच गुट-निर्माण की नवीन पद्धति का सूत्रपात हुआ। 'शक्ति-संतुलन' के सिद्धान्त का तात्पर्य यह है कि किसी भी राष्ट्र को इतना शक्तिशाली न होने दिया जाये, जिससे कि वह अन्य राज्यों के लिए खतरे का कारण बन जाये।

1.1.6.5 राष्ट्रीय भावना का विकास

बारूद के आविष्कार ने सामन्तीय-व्यवस्था की जड़ें खोखली कर दीं और उसके स्थान पर केन्द्रीय शक्ति का विकास हुआ। धार्मिक आन्दोलन के कारण लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत हुई और राष्ट्रीय चर्चों की स्थापना की गई। लूथरवाद ने जर्मन-राष्ट्रीयता, कैल्विनवाद ने डच-राष्ट्रीयता और आंग्ल-चर्च ने ब्रिटिश-राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया। इसी समय यूरोप के अनेक विद्वानों द्वारा राष्ट्रीय-भाषाओं में प्रादेशिक साहित्यों का सृजन किया गया। इन बातों से यूरोप में राष्ट्रीयता की भावना का अभ्युदय हुआ। इस कारण समान जाति, धर्म और भाषा वाले लोगों ने अपने को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने का कार्य प्रारम्भ किया। राष्ट्रीयता की भावना के विकास के कारण यूरोप का विभिन्न देशों में विभाजन भी प्रारम्भ हो गया।

1.1.6.6 कला का विकास

इस काल में कलाकारों और शिल्पियों ने भी प्राचीन ललितकलाओं से प्रेरणा प्राप्त की और नये आदर्श स्थापित किये। मध्ययुगीन कला धर्म से प्रभावित थी, पर प्राचीन साहित्य और कला के प्रति विद्वानों और कलाकारों की अभिरूचि एवं अध्ययनशीलता ने मध्यकालीन विविध कलाओं के स्वरूप को परिवर्तित और परिवर्द्धित कर दिया। अतः कला के सभी क्षेत्रों में प्राचीनता के आदर्श अपनाये जाने लगे और उनकी उन्नति होने लगी। पुनर्जागरण के युग में कला के विविध अंगों - मूर्ति-निर्माण, स्थापत्य कला, चित्रकला और संगीत-कला का जो अपूर्व विकास हुआ, उसका संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है -

1.1.6.6.1 मूर्ति कला

पुनर्जागरण के काल में मूर्तिकला का प्रथम पथ-प्रदर्शक लोरेंजो गिबर्टी था। बाद के कलाकारों ने उनसे अनुप्राणित होकर मूर्तिकला को विकसित किया। इन कलाकारों में दोनाटेलोए लुकादेला रोबियाए माइकेल एंजलो आदि प्रमुख थे। इनमें माइकेल एंजलो का नाम सबसे अधिक प्रसिद्ध है। उनकी कृतियों में आदर्श और यथार्थ का उचित सम्मिश्रण था। रोम में निर्मित मोसेज और फलोरेन्स में स्थित मेडिसी के गिरजाघरों की मूर्तियाँ इनकी उत्कृष्टतम कृतियाँ मानी जाती हैं। उन्होंने अपने जीवनकाल में अनेक मूर्तियों का निर्माण किया। उनके द्वारा निर्मित मूर्तियों में सौन्दर्य-बोध अद्भूत था। वे मूर्तिकार और चित्रकार के साथ-साथ कवि भी थे। उनकी कृतियाँ उनकी अमरता का प्रमाण हैं। उनका काल 1475 ई. -1564 ई. के बीच माना जाता है। वे कला की सभी विधाओं में पारंगत थे।

1.1.6.6.2 स्थापत्य कला

मध्यकाल की स्थापत्य-कला में 'गॉथिक शैली की प्रधानता थी। पुनर्जागरण के काल में स्थापत्य-कला के क्षेत्र में नवीन शैलियों का आविर्भाव हुआ, जिसमें मौलिकता और जीवंतता प्रमुख थी। इस काल में कलाकारों ने प्राचीन यूनानी और रोमन शैलियों को पुनस्थापित करने का प्रयास किया। स्थापत्य-कला के क्षेत्र में एकता, सौन्दर्य और सूक्ष्मता के दर्शन हुए। इस काल में स्थापत्य-कला का प्रारम्भ फलोरेन्स निवासी फिलियो ब्रुनेश्लेची द्वारा हुआ। इटली का सेंट पीटर्स चर्च स्थापत्य-कला का उत्कृष्ट नमूना है। इस कला के विकास में राफेल और माईकल एंजलो के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

1.1.6.6.3 चित्रकला

राफेल उस युग का महत्वपूर्ण चित्रकार था, जिसने अपने चित्रों में सौन्दर्य, प्राणवता और भव्यता का दर्शन कराया। उसने अपने चित्रों में नारी के भावों का बड़ी सजीवता के साथ चित्रण किया है। उसका काल 1483 से 1520 के बीच रहा। वह अल्पायु में ही परलोकवासी हो गया। स्पेन के शासक फिलिप द्वितीय और फ्रांस के शासक फ्रांसिस प्रथम ने इस कला को प्रोत्साहित किया। तत्पश्चात अन्य राज्यों ने भी चित्रकला को संरक्षण दिया।

यूरोप की मध्यकालीन चित्रकला धर्म से प्रभावित थी, पर पुनर्जागरण के काल में यथार्थ के चित्रण पर जोर दिया गया। चित्रों को जीवन के अधिक समीप लाने का प्रयास किया गया। अन्य कलाओं की तरह चित्रकला के क्षेत्र में भी इटली ने यूरोप के अन्य राज्यों का पथ-प्रदर्शन किया। राजाओं का आश्रय पाकर चित्रकला का विकास होने लगा। चित्रकला के क्षेत्र में लिओनार्दो-द-विन्सी का योगदान अत्यन्त ही महत्वपूर्ण था। वे अनेक गुणों की खान थे। वे इंजीनियर, संगीतकार, दार्शनिक और चित्रकार थे। उनमें अद्भुत कल्पनाशीलता और भाव-भंगिमा थी। वह फलोरेन्स का निवासी था और उसकी कृतियाँ उनकी प्रसिद्धि का प्रमाण हैं। मोनालीसा उनकी एक अमर कृति है। उनके चित्रों में प्रकृति और मानव जीवन की विशेषताओं का चित्रण बड़ी सजीवता के साथ किया गया है। उनका काल 1452 ई. से 1519 ई. के मध्य था।

1.1.6.6.4 संगीत-कला

पुनर्जागरण के काल में संगीत-कला के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। संगीत भी यूनानी और रोमन आदर्शों से प्रभावित हुआ। इटली में, इस युग के अनेक संगीतज्ञ थे, जिनमें ग्रेविली और पेलेस्ट्रीना आदि के नाम प्रमुख हैं।

1.1.6.7 लोक-भाषाओं का विकास

मध्यकाल में लैटिन और यूनानी भाषाओं की प्रधानता के कारण लोक-भाषाओं का विकास बड़ी धीमी गति से हुआ, पर 16वीं सदी में लोक-भाषाओं में रचित राष्ट्रीय साहित्य की गई जिसके प्रति लोगों का रूझान बढ़ने लगा, क्योंकि सर्वसाधारण लोग कठिन लैटिन और यूनानी भाषाओं की अपेक्षा लोक-भाषाओं में रचित साहित्य को अधिक पसंद करते थे। छापेखाने ने लोगों में राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन के प्रति रूचि को बढ़ाने में सहायता पहुँचाई। छापेखाने की सहायता से अधिक संख्या में पुस्तकें जनता के अध्ययन के लिये उपलब्ध होने लगीं। अब बड़ी संख्या में लोक-भाषाओं में रचित साहित्य, शब्द कोष, व्याकरण एवं पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होने लगी। राष्ट्रीय साहित्य में मार्टिन लूथर द्वारा जर्मन भाषा में लिखित बाईबिल, जॉन काल्विन द्वारा रचित ''इन्स्टीट्यूट ऑफ दी क्रिश्चियन रिलीजन'' आदि प्रभावशाली रचनाएँ हैं। इस तरह इटली का मार्ग-दर्शन प्राप्त कर यूरोप में भी राष्ट्रीय साहित्य का सृजन होने लगा। दांते और पेट्रार्क जैसे विद्वानों ने इटालियन साहित्य को अमरता प्रदान की। इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय साहित्य के निर्माण में मिल्टन, शेक्सपियर और टॉमस मूर आदि ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस तरह अब यूरोप में राष्ट्रीय साहित्य का उत्तरोत्तर विकास होने लगा।

इस प्रकार पुनर्जागरण होना यूरोप की एक महान् घटना थी। पुनर्जागरण का विद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा सम्पूर्ण समाज पर बहुत प्रभाव पड़ा। ऑक्सफोर्ड तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों में नये कॉलेज खोले गये। उच्च वर्ग में शिक्षा-संस्कृति का प्रचलन हो गया। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप 15वीं सदी के अंतिम पच्चीस वर्षों में काव्य के महान् पुष्प खिले। एक ऐसे युग का प्रादुर्भाव हुआ जिसमें पृथ्वी के नये क्षेत्र, चेतना के नवीन आयाम, एक साथ उद्घाटित हुए। वास्तव में यह एक महान् युग का प्रारम्भ था जिसके सुप्रभात में जीवन वरदान था।

1.1.7 भौगोलिक खोजें

आधुनिक यूरोप के प्रारम्भिक वर्षों में सांस्कृतिक पुनर्जागरण के साथ ही भौगोलिक खोजें भी बड़ी महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। मध्ययुग में मुस्लिम आक्रमणकारियों की भारतीय विजयों के परिणामस्वरूप निकट-पूर्वी एवं मध्य-पूर्वी देशों के साथ भारत का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हो गया था। किन्तु कुस्तुन्तुनिया के मार्ग के अवरूद्ध होने और पुनर्जागरण के कारण यूरोप में भौगोलिक अनुसंधान का कार्य प्रारम्भ हुआ, जिसने वहाँ के व्यापारियों और धार्मिक संस्थाओं के लिए नवीन कार्यक्षेत्र प्रस्तुत किया। केन्द्रीकृत राष्ट्रीय राज्यों के विकास ने सामुद्रिक-गतिविधियों और भौगोलिक खोजों के कार्यों को और भी गति प्रदान की। इस कारण यूरोपीय देशों के जीवन की गतिशीलता में पर्याप्त रूप से वृद्धि हुई और यूरोपवासी नवीन देशों के साथ सम्पर्क साधने को प्रोत्साहित हुए।

मध्ययुगीन व्यापार-मार्गों के बन्द हो जाने से यूरोपीय उपभोक्ताओं को पूर्वी देशों से प्राप्त दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो सकी। अतः अब राज्यों द्वारा प्रोत्साहित होकर यूरोपीय साहसी नाविकों ने नये मार्गों की खोज प्रारंभ की। सौभाग्यवश इस समय तक 'कम्पास' का आविष्कार हो चुका था, जिसके द्वारा दिशाओं का सही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता था। 15वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बड़े उत्साह, लगन एवं अध्ययन के साथ नये व्यापार-मार्गों की खोजें पूर्वी देशों से सम्बन्ध-स्थापन हेतु आरम्भ की गयीं। पश्चिमी यूरोप के महत्वाकांक्षी राष्ट्रों ने अपने आर्थिक तथा व्यापारिक स्वार्थों एवं उद्देश्यों की पूर्ति हेतु इन साहसी नाविकों को

पर्याप्त प्रोत्साहन तथा सहायता प्रदान की। इन भौगोलिक खोजों का मुख्य उद्देश्य व्यापार था, किन्तु इसके परोक्ष उद्देश्य उपनिवेश-स्थापना, धर्म-प्रचार एवं साम्राज्य-विस्तार व राष्ट्रीय गौरव की वृद्धि इत्यादि भी थे।

16वीं सदी के प्रारम्भ में विविध देश अपने में ही सीमित थे एवं इन दिनों 'विश्व-एकता की सभ्यता' जैसी कोई धारणा न थी, परन्तु 16वीं सदी के भौगोलिक खोजों के परिणामस्वरूप विश्व के विविध क्षेत्र परस्पर सम्बद्ध हो गये। जिसके फलस्वरूप 'विश्व-सभ्यता' का सृजन सम्भव हो सका।

भौगोलिक खोजों के दो प्रमुख कारण थे - (1) आर्थिक और (2) धार्मिक। इन दोनों कारणों से प्रेरित होकर यूरोप के निवासियों ने विश्व के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध स्थापित किया। विज्ञान के आविष्कारों और यात्रा-संस्मरणों के कारण भी यात्राओं एवं भौगोलिक अनुसंधान का कार्य सरल हुआ

दिशा-सूचक-यंत्र और अक्षांश-देशांश जानने की सुविधा के कारण सामुद्रिक यात्राएँ खतरे से रहित हो गयीं। मानचित्रों और परिवहन सम्बन्धी सुविधाओं ने भी नाविकों को समुद्री-अभियानों के लिए प्रोत्साहित किया।

मार्कोपोलो ने सन् 1260 ई. से 1295 ई. के बीच चीन, जापान और अन्य पूर्वी देशों की यात्राएँ की थीं। उसके द्वारा लिखित यात्रासंस्मरण के कारण भी नाविक पूर्व की ओर यात्रा करने के लिए प्रेरित हुए। उसके यात्रा विवरण में उन देशों की विशेषताओं और वहाँ से होने वाली व्यापारिक संभावनाओं का भी वर्णन निहित है। मार्कोपोलो की यात्राओं से नाविकों को मार्गदर्शन मिला। इसी तरह 1507 ई. में जर्मनी में 'कास्मोग्राफी-इन्ट्रोडक्शियो' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें अमेरिगो वैस्चुपी की यात्राओं का विवरण है। इससे भी यात्रियों को बड़ा लाभ हुआ।

1.1.7.1 पुर्तगाल एवं स्पेन का योगदान

नवीन भौगोलिक आविष्कार, व्यापार-मार्गों की खोज एवं यूरोपीय विस्तार के क्षेत्र में पुर्तगाल सबसे अग्रगण्य राज्य था। यूरोप के दक्षिण-पूर्वी तटीय राज्य पुर्तगाल के राजा बड़े महत्वाकांक्षी एवं आविष्कारों तथा खोजों के प्रमुख समर्थक थे। नये भौगोलिक आविष्कारों व खोजों की दिशा में प्रथम महत्वपूर्ण प्रयास 1415 ई. में अफ्रीका के तटीय प्रदेश सीटा पर पुर्तगाल द्वारा आधिपत्य करना था। वस्तुतः इसके परिणामस्वरूप पूर्वी दिशा की ओर आविष्कारों एवं खोजों का मार्ग प्रशस्त हो सका। पुर्तगाल के राजकुमार प्रिन्स हेनरी द नेविगेटर (1394 ई.-1460 ई.) के सतत् प्रयासों के परिणाम स्वरूप एजोरे एवं मडेरिया के द्वीप-समूहों को खोज निकाला गया। तत्पश्चात् 1486 ई. में पुर्तगाली नाविक बार्थलोमै डायस ने उत्तमाशा अन्तरीप को खोज निकाला। इसके बाद 1498 ई. में वास्को-डि-गामा ने उत्तमाशा-अन्तरीप का चक्कर काटकर भारत के कालीकट बन्दरगाह में पदार्पण किया। यह खोज यूरोप के इतिहास में बड़ी महत्वपूर्ण, प्रभावोत्पादक एवं सीमा-चिन्ह सिद्ध हुई। इसने इटली एवं अरबों के व्यापारिक महत्व व एकाधिकार का अन्त कर दिया। अतः भूमध्यसागर का गौरव व प्रभुत्व पतनोन्मुख होने लगा।

स्पेन के राजाओं के संरक्षण एवं प्रोत्साहन से एक और नये मार्ग को खोज निकाला गया। स्पेन की सहायता से प्रोत्साहित होकर क्रिस्टोफर कोलम्बस नामक एक इटालियन साहसी नाविक ने विशाल अटलाण्टिक महासागर की लम्बी एवं खतरनाक यात्रा की एवं अन्ततः सन्1492 में उसने अमेरिकी महाद्वीप का पता लगाया। 1497 ई. में जॉन केबट ने केप ब्रिटन द्वीप का पता लगाया। 1500 ई. में केब्राल ने ब्राजील को ढूंढ निकाला। 1519 ई. में स्पेन के कोर्तेज ने मेक्सिको की खोज की। मैगेलन नामक व्यक्ति ने यूरोप से पश्चिमी दिशा की ओर निरन्तर यात्रा करने के उपरान्त समस्त विश्व की परिक्रमा की। 16वीं सदी के पूर्वार्द्ध में

जहाँ एक ओर पूर्वी देशों में पुर्तगाल द्वारा व्यापार-वृद्धि एवं शोषण हो रहा था, वहाँ दूसरी ओर अमेरिकी महाद्वीप में स्पेनी विस्तार एवं व्यापार-प्रसार हो रहे थे।

1.1.7.2 अन्य राष्ट्रों का योगदान

पुर्तगाल एवं स्पेन से प्रोत्साहित होकर यूरोप के अन्य राष्ट्र भी भौगोलिक आविष्कार, व्यापार-मार्गों की खोज, उपनिवेश-स्थापना एवं साम्राज्यवाद के कार्यों में जुट गये। यद्यपि कुछ समय तक अपनी आन्तरिक एवं राष्ट्रीय कठिनाइयों व समस्याओं के कारण अन्य राष्ट्रों के प्रयास विलम्ब से प्रारम्भ हुए, किन्तु अन्ततोगत्वा 16वीं सदी के अन्त एवं 17वीं सदी के पूर्वार्द्ध में फ्रांस, इंग्लैण्ड, इटली इत्यादि राज्य भी इस क्षेत्र में आ उतरे। फ्रांस के शासक हेनरी चतुर्थ के काल में न केवल शान्ति, व्यवस्था, आर्थिक उन्नति तथा सुरक्षा स्थापित की गयी, वरन् साथ ही कनाडा तथा लुसियाना में फ्रांसीसी उपनिवेश स्थापित किये गये। लुई चतुर्दश के काल में फ्रांस के औपनिवेशिक साम्राज्य का अत्यधिक विस्तार हुआ। इसी प्रकार इंग्लैण्ड हॉलैण्ड, इटली इत्यादि राज्यों ने भी उपनिवेश-स्थापन, व्यापार-वृद्धि एवं साम्राज्य-विस्तार के प्रयास प्रारम्भ किये।

1.1.7.3 भौगोलिक खोजों के परिणाम

15वीं सदी से लेकर 17वीं सदी के मध्य तक यूरोपीय राज्यों द्वारा किये गये भौगोलिक खोजों के अनेक महत्वपूर्ण एवं क्रान्तिकारी परिणाम हुए। इन खोजों ने यूरोपीय जनता की ज्ञान-परिधि में वृद्धि की जिससे मध्ययुगीन रूढ़िवादिता, अंधविश्वास और धर्म का प्रभाव कम हुआ तथा इन खोजों ने पूर्वी देशों और अमेरिका के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन को बड़ा प्रभावित किया।

भौगोलिक अनुसंधान के कारण यूरोपीय व्यापार और वाणिज्य में अपूर्व वृद्धि हुई और नयी पद्धति से बड़े पैमाने पर व्यापार होने लगा। यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति आरम्भ हो गयी। इसके कारण मध्ययुगीन व्यापारिक संस्थाओं के स्थान पर बड़ी-बड़ी कंपनियाँ और बैंकों की स्थापना होने लगी। नवीन खोजे हुए प्रदेशों से यूरोपीय राज्यों को अपार धनराशि और प्राकृतिक साधन प्राप्त हुए। पूँजीवाद के विकास ने यूरोपीय राजनीतिक और सामाजिक दिशा को प्रभावित किया। नये देशों से अपार साधनों की प्राप्ति ने यूरोपीय देशों में आपसी औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धाएँ और साम्राज्य विस्तार के लिये होड़ आरम्भ कर दी। फलस्वरूप उनके बीच अनेक युद्ध हुए। इस प्रकार एशियायी, अफ्रीकी और अमेरिकी देशों में यूरोपीय व्यापार-विस्तार की पूर्ति होने लगी। इसके कारण यूरोप की जनता का जीवन सुखी और सम्पन्न हो गया, किन्तु कालान्तर में इस धन सम्पन्नता ने उन्हें अकर्मण्य, आलसी और विलासी बना दिया।

स्पेन एवं पुर्तगाल द्वारा उपनिवेशीकरण की नीति के परिणामस्वरूप घृणित दास-व्यापार का प्रारम्भ हुआ, क्योंकि उपनिवेशों की वृद्धि के लिए सस्ते मजदूरों की आवश्यकता थी। अतः पश्चिमी द्वीपसमूह, मैक्सिको, पेरू एवं ब्राजील इत्यादि देशों में नीग्रो-दास व्यापार को अत्यधिक प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। अब नये क्षेत्रों में यूरोपीय लोग जाकर व्यापार करने लगे और वहाँ रहने वाले मूल निवासियों को दास बनाकर उनका व्यापार आरम्भ कर दिया, जो एक अमानवीय कृत्य था। इस प्रकार भौगोलिक अनुसंधान के कारण दास-प्रथा आरम्भ हुई, जो आगे चलकर मानवता के इतिहास में एक कलंकपूर्ण अध्याय बनकर रह गई। नई-दुनिया की खोज के कारण अब यूरोप छोटा प्रतीत होने लगा। उसने पूर्व के देशों और नयी दुनिया से कुछ नई बातें सीखीं। फलस्वरूप मध्यकालीन धर्म-प्रधान परम्पराएँ अमान्य की जाने लगीं और अंततः यूरोप में धर्म-सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हो गये। इन नये भौगोलिक आविष्कारों तथा व्यापार-मार्गों की खोजों के परिणामस्वरूप

भूमध्यसागर का व्यापारिक महत्व घटने लगा, इटली के नगर-राज्यों की पूर्व-प्रसिद्धि तथा व्यापारिक महत्ता समाप्त हो गयी एवं अटलाण्टिक महासागर का महत्व बढ़ने लगा।

1.1.8 सारांश

नवयुग के अवतरण की सूचना देने वाला तथ्य पुनर्जारण था, जिसका प्रभाव इंग्लैण्ड पर सर्वप्रथम हेनरी सप्तम के समय में पड़ा। 'रेनेसाँ' (Renaissance) शब्द फ्रांसीसी भाषा का है, जिसका अर्थ पुनर्जन्म अथवा पुनर्जागरण होता है। पुनर्जागरण की कोई स्पष्ट और सहज परिभाषा नहीं दी जा सकती है। व्यापक तौर पर इसका आशय उन परिवर्तनों की प्रक्रिया से है जो मध्य युग से आधुनिक काल के मध्य यूरोप में हुए।
पुनर्जागरण के कारण - (1) कुस्तुनतुनिया का पतन (2) मानववाद (3) आविष्कार और खोजें
यूरोप में पुनर्जागरण - (1) इटली में पुनर्जागरण (2) इंग्लैंड में पुनर्जागरण (3) इटली और इंग्लैंड के पुनर्जागरण में अन्तर
पुनर्जागरण के प्रभाव एवं महत्व - (1) धार्मिक आन्दोलन (2) भौगोलिक खोजें (3) औद्योगिक क्रान्ति (4) औपनिवेशिक साम्राज्यवाद (5) राष्ट्रीय भावना का विकास (6) कला (7) लोक भाषाओं का विकास
भौगोलिक खोजें - (1) पुर्तगाल एवं स्पेन का योगदान (2) अन्य राष्ट्रों का योगदान (3) भौगोलिक खोजों के परिणाम

1.1.9 बोध प्रश्न

1.1.9.1 लघुउत्तरीय प्रश्न

1. भौगोलिक खोजों के परिणामों पर प्रकाश डालिये।
2. मानवतावाद से आप क्या समझते हैं ?
3. पुनर्जागरण से आप समझते हैं ?
4. यूरोपीय पुनर्जागरण के कोई दो कारण लिखिये।
5. यूरोपीय पुनर्जागरण का कोई दो विशेषताएँ लिखिये।
6. पुनर्जागरण कालीन स्थापत्य कला पर प्रकाश डालिये।
7. पुनर्जागरण कालीन मूर्ति कला का परिचय दीजिये।
8. पुनर्जागरण के महत्व की विवेचना कीजिये।
9. यूरोप में नवीन भौगोलिक खोजों के कारण बताइये।
10. इटली में पुनर्जागरण के कारण लिखिये।

1.9.2 दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. पुनर्जागरण से आप क्या समझते हैं ? पुनर्जागरण के कारणों का वर्णन कीजिये ?
2. पुनर्जागरण के दौरान कला तथा वैज्ञानिक उन्नति का वर्णन कीजिये ?
3. पुनर्जागरण की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिये।
4. इटली में पुनर्जागरण की विवेचना कीजिये।
5. इंग्लैण्ड में पुनर्जागरण का वर्णन कीजिये।
6. पुनर्जागरण कालीन कला की विवेचना कीजिये।

7. 'सांस्कृतिक पुनरुत्थान' से आप क्या समझते हैं ? इसके प्रभावों को समझाइये।
8. यूरोप में हुई 'भौगोलिक खोजों' पुर्तगाल और स्पेन के प्रयासों का वर्णन कीजिये।
9. यूरोप के 'पुनर्जागरण' के महत्व का विवेचन कीजिए।
10. विश्व में हुई 'भौगोलिक खोजों' का उल्लेख कीजिए।

1.1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कैटलबी, सी.डी.एम.: हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न टाइम्स
2. हेजन, सी.डी.: मॉडर्न यूरोपीयन हिस्ट्री
3. चैहान, देवेन्द्र सिंह: यूरोप का इतिहास (1815-1919)
4. फाइप, सी.एच.: ए हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप
5. गूच, जी.पी.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
6. फिशर, एच.ए.एल.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
7. हेज, जे.एच.: पोलिटिकल एंड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप, भाग 1 एवं 2
8. ग्रान्ट एवं टेम्परले: यूरोप इन दि 19 एंड 20 सेन्चुरीज
9. मेरियट, जे.ए.आर.: इंग्लैंड सिंस वाटइलू
10. मेरियट, जे.ए.आर.: दि ईस्टर्न क्वेश्चन
11. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-1950)
12. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-2000)
13. पान्डेय, धनपति: आधुनिक ऐशिया का इतिहास
14. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक यूरोप का इतिहास
15. वर्मा, दीनानाथ: अंतर्राष्ट्रीय संबंध
16. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक एशिया का इतिहास
17. वर्मा, रमेशचन्द्र: इंग्लैंड का इतिहास
18. सिन्हा विपिन बिहारी: आधुनिक ग्रेट ब्रिटेन
19. मेहता बी. एन.: यूरोप का इतिहास
20. शर्मा एल. पी.: इंग्लैंड का इतिहास
21. चैहान, देवेन्द्र सिंह: समकालीन यूरोप (1919-1950)
22. महाजन वी. डी.: यूरोप का इतिहास (1789-1945)
23. वर्मा लाल बहादुर: यूरोप का इतिहास (भाग 1 एवं 2)
24. दुबे शुकदेव प्रसाद : आधुनिक विश्व का कूटनीतिक इतिहास (भाग 1 एवं 2)
25. नेहरू जवाहरलाल: विश्व इतिहास की झलक

खंड - 1 भौगोलिक खोजें एवं औद्योगिक क्रान्ति
इकाई - 2 यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति

इकाई की रूपरेखा

1.2.1 उद्देश्य

1.2.2 प्रस्तावना

1.2.3 औद्योगिक क्रान्ति की उत्पत्ति

1.2.3.1 अभिप्राय

1.2.3.2 औद्योगिक क्रान्ति के उत्प्रेरक

1.2.4 औद्योगिक क्रान्ति सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में होने के कारण

1.2.4.1 आंतरिक शांति और बाह्य सुरक्षा

1.2.4.2 इंग्लैण्ड में प्रगतिशील समाज

1.2.4.3 पूँजी का संचय और आर्थिक दृढ़ता

1.2.4.4 इंग्लैण्ड का औपनिवेशिक साम्राज्य

1.2.4.5 उत्कृष्ट नौ सेना

1.2.4.6 स्वतंत्र विचारों का वातावरण

1.2.4.7 लोहे व कोयले की पर्याप्त मात्रा

1.2.4.8 अन्य अनुकूल स्थितियाँ

1.2.4.9 श्रमिकों की संख्या-वृद्धि

1.2.5 औद्योगिक क्रान्ति के कारण

1.2.5.1 वस्त्र उद्योग में विविध यांत्रिकी आविष्कार

1.2.5.2 वाष्प शक्ति का आविष्कार और यंत्र

1.2.5.3 लोहे और कोयले की खानें

1.2.5.4 परिवहन व्यवस्था

1.2.5.5 बिजली, तार और टेलीफोन

1.2.5.6 पेट्रोल चलित यंत्र

1.2.5.7 कृषि की उत्पादन पद्धति में परिवर्तन

1.2.6 औद्योगिक क्रांति के प्रभाव और परिणाम

1.2.6.1 राजनीतिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.6.2 आर्थिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.6.3 सामाजिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.7 यूरोप में औद्योगिक क्रांति का प्रसार

1.2.7.1 फ्रांस

1.2.7.2 जर्मनी

1.2.7.3 इटली

1.2.7.4 रूस
1.2.7.5 बेल्जियम
1.2.8 सारांश
1.2.9 बोध प्रश्न
1.2.9.1 लघु उत्तरीय प्रश्न
1.2.9.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1.2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.2.1 उद्देश्य

वियना-कांग्रेस के बाद के काल के लक्षणों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वह युग 'तैयारी का युग' था जिसमें जहाँ एक ओर फ्रेंच कान्ति ने महान् राजनीतिक परिवर्तनों के लिए मार्ग तैयार किया, वहाँ दूसरी ओर औद्योगिक क्रान्ति ने उत्पादन एवं वितरण की पद्धति में उन्नति करके सामाजिक एवं अर्थिक क्षेत्रों में बड़े महत्वपूर्ण परिवर्तनों का सूत्रपात किया। 18वीं सदी के अन्त में यूरोप में निरंकुश शासन के विरुद्ध राष्ट्रीयता एवं उदारवाद का संघर्ष हुआ किन्तु इस युग में इन उदात्त भावनाओं को सफलता के मार्ग पर अग्रसर करने वाली शक्ति का अभाव रहा। इस अभाव की पूर्ति औद्योगिक क्रान्ति द्वारा हुई। इस इकाई का उद्देश्य 18वीं सदी में यूरोप में हुई औद्योगिक क्रान्ति एवं उसके प्रसार की विस्तृत विवेचना करना है।

1.2.2 प्रस्तावना

क्रान्ति का साधारणतया जैसा अर्थ लिया जाता है, उससे औद्योगिक क्रान्ति सर्वथा भिन्न थी। इस क्रान्ति में लड़ाई-झगड़ा या किसी प्रकार का रक्तपात नहीं हुआ। यह औद्योगिक क्षेत्र में हुई क्रान्ति थी। 18वीं सदी में विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों के साथ-साथ यन्त्रों का भी आविष्कार हुआ। परिणामस्वरूप तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में भी तेजी से परिवर्तन हुआ व जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई। यह क्रान्ति सर्वप्रथम इंग्लैंड में प्रारंभ हुई तत्पश्चात यूरोप एवं विश्व में इसका प्रसार हुआ। इस प्रकार 18वीं सदी में जो परिवर्तन हुए उसे 'औद्योगिक क्रान्ति' कहा गया। प्रस्तुत इकाई में औद्योगिक क्रान्ति के कारणों परिणामों, प्रभावों एवं यूरोप में इसके प्रसार का वर्णन किया जाना प्रस्तावित है। साथ ही इकाई के अन्त में पाठ का सारांश, बोध प्रश्न एवं संदर्भ ग्रंथ सूची भी दी जा रही है।

1.2.3 औद्योगिक क्रान्ति की उत्पत्ति

1.2.3.1 अभिप्राय

17वीं सदी तक विश्व के सभी देश कृषि प्रधान रहे। साथ-साथ अन्य लघु उद्योग भी थे। उनके उत्पादन के साधन जैसे-हल, चरखा आदि मानव शक्ति से ही चलते थे। किन्तु 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में विविध प्रकार के यंत्रों का निर्माण हुआ। इंग्लैण्ड में भाप से चलने वाले इंजिनों व मशीनों के आविष्कार हुए। इन आविष्कारों का उपयोग उद्योग-धन्धों और व्यवसायों में किया गया। जिससे उत्पादनों के साधनों और उत्पादन की पद्धति में आमूल परिवर्तन आ गये। इसी बीच लोहे और कोयले की खानों का पता लग जाने से इनका उपयोग भी मशीनों के निर्माण, कल-कारखानों और उद्योग-व्यवसायों के लिये होने लगा। इससे

उत्पादन के साधनों और पद्धति में और औद्योगिक क्षेत्र में तीव्र गति से बड़े परिवर्तन हुए। इसे ही औद्योगिक क्रान्ति कहा जाता है। औद्योगिक क्रान्ति का अर्थ है, उन परिवर्तनों से जिनके अनुसार प्राचीनकाल के सीमित गृह उद्योगों के बदले भाप शक्ति के कारखानों में बड़ी मात्रा में उत्पादन होने लगा। उत्पादन के साधनों में परिवर्तन और उत्पादन में अधिकतम वृद्धि ही औद्योगिक क्रान्ति है।

सर्वप्रथम औद्योगिक क्रान्ति 18वीं सदी में इंग्लैण्ड में हुई। तत्पचशत यूरोप में और सबसे अन्त में एशिया में आई। आर्नोल्ड टॉयन्बी ने अपनी पुस्तक Lectures on Industrial Revolution में कहा है कि औद्योगिक क्रान्ति कोई आकस्मिक घटना नहीं है वरन विकास की सतत् प्रक्रिया है।

2.3.2 औद्योगिक क्रान्ति के उत्प्रेरक

(1) वस्तुओं की बढ़ती हुई माँग, बढ़ता व्यापार और नये बाजार और मंडियाँ।
(2) उत्पादन के साधनों और उत्पादन पद्धति में परिवर्तन लाने की आवश्यकता।
(3) शोधकार्य और यंत्रों का निर्माण।
(4) यंत्रों और कारखानों में लगने वाली पूँजी।
(5) विचारों की स्वतंत्रता और लोकतंत्र प्रणाली का सहायक वातावरण।
(6) लोहे और कोयले की निरंतर उपलब्धता।
(7) मशीनों द्वारा विभिन्न माल व वस्तुओं के उत्पादन के लिये आवश्यक कुशल प्रशिक्षित श्रमिक।
(8) उद्योगों और कारखानों को स्थापित करने वाले उद्योग-व्यवसायी।

1.2.4 औद्योगिक क्रान्ति सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में होने के कारण

इंग्लैंड में जार्ज तृतीय के शासनकाल से पूर्व शिल्पकारों की वस्तुयें साधारणतया हाथ से ही बनायी जाती थी। वहां बड़े-बड़े कारखाने नहीं थे। शिल्पकार अपने निवास स्थान पर ही कुटीर उद्योग के रूप में वस्तुयें तैयार करते थे। परन्तु 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इंगलैंड के व्यवसाय, व्यापार और शिल्पकारी के क्षेत्रों में इतने महान् परिवर्तन हुए कि देश की कायापलट हो गई। इन परिवर्तनों के कारण उस काल तक अपनाई हुई वस्तु निर्माण प्रणाली को पूरी तरह बदल कर नवीन विधि से उत्पादन किया जाने लगा। उस समय तक जिन वस्तुओं को शिल्पी अपने हाथ से बनाते थे अब उनका निर्माण मशीनों द्वारा किया जाने लगा। बड़े-बड़े नगरों में विशाल कारखानों की स्थापना होने लगी। कपड़ा बुनने, सूत कातने, कृषि यन्त्र बनाने और अन्य अनेक उपयोगी वस्तुयें तैयार करने के लिये नवीन वस्त्रों और मशीनों का अविष्कार किया जाने लगा। फलतः इंगलैंड के व्यापारिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में परिवर्तन होने लगे। देश कृषि-प्रधान के स्थान पर व्यवसाय प्रधान बन गया। इंग्लैण्ड में सर्वप्रथम औद्योगिक क्रान्ति होने के कारण निम्नलिखित हैं -

1.2.4.1 आंतरिक शांति और बाह्य सुरक्षा

ब्रिटेन यूरोप से समुद्र द्वारा अलग रहा है। ब्रिटेन की जल सेना ने बाहरी आक्रमणों से रक्षा कर आंतरिक शांति और बाहरी सुरक्षा स्थापित करने में बड़ी सहायता की। देश में राजनीतिक स्थिरता , शांति और कानून व्यवस्था होने से देश में लोगो में नवीन विचारधाराएँ उत्पन्न हुईं।

1.2.4.2 इंग्लैण्ड में प्रगतिशील समाज

अन्य यूरोपीय देशों के समाज की भाँति इंग्लैण्ड का समाज नहीं था। इंग्लैण्ड के समाज में सामन्ती व्यवस्था, निरंकुश शासन के अत्याचार और शोषण, दास प्रथा आदि नहीं थे। वहाँ के नागरिकों को

राजनीतिक स्वतंत्रता और मौलिक अधिकार प्राप्त थे, जो अधिकांश यूरोपवासियों को प्राप्त नहीं थे। ऐसा समाज स्वतंत्र चिन्तन और आविष्कारों के लिये प्रेरणादायक था। इस समाज में मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग की जनसंख्या में खूब वृद्धि हुई। इससे उद्योगों के विकास में पूँजी और श्रमिक सरलता से उपलब्ध हो सके।

1.2.4.3 पूँजी का संचय और आर्थिक दृढ़ता

ब्रिटेन के बाजारों में विभिन्न वस्तुओं की बढ़ती हुई माँग को पूरा करने के लिये अनेक व्यापारी कारीगरों को अपने घर पर एकत्र करने लगे और कच्चे माल तथा उत्पादन के साधनों की आपूर्ति करके दैनिक मजदूरी प्रणाली से उनसे अधिकाधिक उत्पादन करने लगे। इस पद्धति से इंग्लैण्ड में कारखाने बनना प्रारंभ हुए, जिससे उत्पादन के वेग और परिमाण में वृद्धि हुई वस्तुओं के उत्पादन और बिक्री के बढ़ने से कारखानों के स्वामियों के पास संपत्ति एकत्र होने लगी और इससे पूँजी का संचय हुआ।

इस पूँजी का उपयोग इंग्लैंड की औद्योगिक क्रान्ति में हुआ। अन्य देशों की तुलना में इंग्लैण्ड में बैंक प्रणाली बहुत पहले विकसित हो चुकी थी। धन के बाहुल्य से इस बैंक प्रणाली का खूब विकास हुआ। बैंकों द्वारा एकत्रित धनराशि का उपयोग औद्योगिक विकास के लिये किया गया।

इसके अतिरिक्त इंग्लैण्ड का सामुद्रिक व्यापार अत्यधिक बढ़ने से देश की व्यावसायिक, औद्योगिक और आर्थिक दशा अच्छी बन गई। बढ़ते हुये ब्रिटिश साम्राज्य के बल पर, पूर्वी देशों से अधिकाधिक व्यापार करके, ब्रिटेन ने अधिकतम संपत्ति अर्जित की। भारत से भी ब्रिटेन ने करोड़ों रूपये प्राप्त किये। इतिहासकार कनिंघम के अनुसार, ''1757 ई. के बाद के पच्चीस वर्षों में राजनीतिक तथा व्यापारिक आदि अनेक भले-बुरे मार्गों से इंग्लैण्ड ने भारत से करोड़ों रूपयों की लूट की। '' इंग्लैण्ड में यह पूँजी नये-नये कारखानों के लगाने में काम आयी। इस नवीन संचित पूँजी के आधार पर विज्ञान के नवीन सिद्धांतों और आविष्कारों का प्रयोग उद्योग-व्यवसायों में सफलतापूर्वक किया जा सका।

1.2.4.4 इंग्लैण्ड का औपनिवेशिक साम्राज्य

यूरोप में इंग्लैण्ड ऐसा राष्ट्र था जिसके पास सबसे अधिक उपनिवेश थे। एशिया और अफ्रीका के अनेक देशों में इंग्लैण्ड का साम्राज्य फैला हुआ था। इन औपनिवेशिक देशों से इंग्लैण्ड को सुविधापूर्वक कच्चा माल प्राप्त हो जाता था और उसके कारखानों में निर्मित वस्तुओं का विक्रय भी इन उपनिवेशों की मंडियों में हो जाता था।

1.2.4.5 उत्कृष्ट नौ सेना

इंग्लैण्ड के पास सबसे अधिक शक्तिशाली सेना थी। इस शक्तिशाली सेना से इंग्लैण्ड का विदेशी व्यापार सुविधापूर्वक संचालित होता था। इस बलशाली जल सेना के माध्यम से इंग्लैण्ड विश्व के दूरस्थ कोनों से भी बिना किसी व्यवधान के उसके कल-कारखानों के लिये कच्चा माल प्राप्त करता था और अपने देश में निर्मित वस्तुओं को वहाँ सरलता से भेज सकता था।

1.2.4.6 स्वतंत्र विचारों का वातावरण

ब्रिटेन में 1688 ई. की वैभवशाली क्रान्ति के बाद लोकतंत्र स्थायी हो गया। इस लोकतंत्र ने ब्रिटेनवासियों को निर्भिक बना दिया और ये स्वतंत्र भाव से नित्य नवीन बातें सोचने लगे। नयी खोजों और उनके उपयोग के लिये स्वातंत्र्य और निर्भीक वातावरण आवश्यक होते हैं। नये स्वतंत्र वातावरण ने वैज्ञानिकों तथा आविष्कारकर्ताओं को नये-नये प्रयोग तथा आविष्कार करने के लिये प्रेरित किया। फलतः नयी-नयी मशीनों और यंत्रों के आविष्कार हुए और यातायात तथा संचार के साधनों में वृद्धि हुई। नयी खोजों के

परिणामस्वरूप नवीन मशीनों और कारखानों के निर्माण को गति मिली। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन में सुव्यवस्थित शासन पद्धति होने से कृषि और उद्योग में वैज्ञानिक ढंग से मौलिक परिवर्तन हो सके।

1.2.4.7 लोहे व कोयले की पर्याप्त मात्रा

यंत्रों और कारखानों के निर्माण के लिये लोहे और कोयले की उपलब्धि आवश्यक थी। इंग्लैण्ड में पश्चिमी और उत्तरी भागों में लोहे और कोयले की समृद्ध खानों के पास-पास प्राप्त हो जाने से मशीनों और कारखानों के निर्माण में गति मिली और औद्योगिक क्रान्ति को प्रोत्साहन मिला।

1.2.4.8 अन्य अनुकूल स्थितियाँ

लोहे और कोयले की खानों के साथ-साथ ब्रिटेन की कुछ अन्य परिस्थितियाँ भी औद्योगिक क्रान्ति के अनुकूल थीं। वहाँ की नम हवा कपड़ा उद्योग के लिये आदर्श थी। साम्राज्य विस्तार के कारण ब्रिटेन के अधीन नवीन प्रदेशों से कच्चे मालों की पूर्ति कल-कारखानों के लिये हो रही थी। तैयार माल की खपत के लिये ब्रिटेन के अधीन विस्तृत बाजार और मंडियाँ थीं। फलतः लोगों की प्रवृत्ति नवीन आविष्कारों, अन्वेषणों और सुधारों की ओर झुकी। इन अनुकूल परिस्थितियों ने ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति का मार्ग प्रशस्त किया।

1.2.4.9 श्रमिकों की संख्या-वृद्धि

17वीं सदी में इंग्लैण्ड में ऊन का व्यवसाय अधिक था। अतः भेड़ों को पालने और चराने के लिये कृषि भूमि पर जमींदारों ने बाड़े लगा दिये। 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में जमींदारों ने लगभग 35 लाख एकड़ भूमि कृषकों को कोई मूल्य दिये बिना ही भेड़ों के लिये विशाल बाड़ों से घेर ली थी। इससे छोटे कृषक और खेतिहर मजदूर कृषि और मजदूरी से वंचित होकर बेकार हो गये। अतः मजदूरी के लिये ये लोग शहरों में कारखानों में गये। इसी बीच मशीनों के उत्पादन के कारण स्वतः के उत्पादन साधनों से वंचित कारीगर और श्रमिक भी कृषकों और खेतिहर मजदूरों की भाँति ही शहर के कारखानों में अल्प मजदूरी में ही काम करने लगे। इस प्रकार कारखानों में मशीनों से उत्पादन के लिये अत्यन्त ही अल्प मजदूरी में अनेकानेक मजदूर मिल गए। इससे औद्योगिक क्रान्ति की गतिशीलता में वृद्धि हुई।

1.2.5 औद्योगिक क्रान्ति के कारण

18वीं सदी के मध्य तक इंग्लैण्ड मुख्यतया एक कृषि प्रधान देश था, पर इसके बाद वह उद्योग प्रधान देश होता गया। यह औद्योगिक क्रान्ति की प्रक्रिया लगभग 1750 ई. से 1850 ई. तक निरंतर चलती रही। अतः औद्योगिक क्रान्ति के कारण निम्नलिखित हैं -

1.2.5.1 वस्त्र उद्योग में विविध यांत्रिकी आविष्कार

18वीं सदी के मध्य में अंतराष्ट्रीय व्यापार में ब्रिटेन के सूत और सूती कपड़े की अत्यधिक माँग थी। इसलिये वस्त्र उत्पादन के क्षेत्र में विभिन्न यांत्रिकी शोध कार्य होने लगे और औद्योगिक क्रान्ति का प्रारंभ हुआ। 1753 ई. में जान नामक एक अंग्रेज बुनकर ने एक ऐसा करघा बनाया जो 54 इंच चैड़ा कपड़ा बुन सकता था। इससे बुनकरों की बुनने की गति में दुगनी वृद्धि हो गयी। 1764 ई. में लंकाशायर के जुलाहे जेम्स हारग्रीव्ज ने सूत कातने के लिये ''स्पिनिंग जेनी'' नामक यंत्र बनाया। यह 8 तकलियों वाला एक करघा था। इससे 8 गुना अधिक सूत बुनने लगा। इसके पश्चात् इसमें सुधार करके पवन चक्की से चलने वाला करघा बनाया। इसके बाद 1779 ई. में क्राम्टपन ने इन दोनों आविष्कारों को मिलकार पतला और मजबूत सूत कातने वाला ''स्पिनिंग म्यूल'' बनाया। इस आविष्कार से सूत बहुत तेजी से बनने लगा और बुनकरों को

सस्ते दर पर पर्याप्त सूत मिलने लगा। कुछ समय बाद 1785 ई. में एडवर्ड कार्टराइट ने पानी और घोड़ों की शक्ति से चलने वाला यांत्रिक करघा बनाया। 1792 ई. में एली. व्हिटनी नामक एक अमेरिकन ने ''काटनजिंग'' नामक एक ऐसी मशीन बनायी जो तीव्र गति से रूई से बिनौले निकाल देती थी। 1825 ई. में रिचर्ड राबर्ट्स ने पहला स्वचलित यंत्र बनाया। 1846 ई. में एलियास होप नामक अमेरिकी ने सिलाई मशीन का आविष्कार किया। इसके अतिरिक्त वस्त्र को सफेद बनाने की प्रक्रिया, रँगाई, छपाई आदि के लिये नवीन श्रेष्ठ प्रणालियों की खोज की गयी। 1785 ई. में टामसबेल ने कपड़ा छापने का सिलेंडर प्रिंटिग यंत्र बनाया, जिससे ऊनी, तथा सूती कपड़े की छपाई में बहुत विकास हुआ। इन आविष्कारों का प्रयोग सूती वस्त्रों के क्षेत्र में किया जाने लगा और मशीनों से कपड़ा बुनने और छपने लगा। फलतः मेनचेस्टर और लंकाशयर में कपड़ा बनाने के बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हो गये।

1.2.5.2 वाष्प शक्ति का आविष्कार और यंत्र

अब तक कारखानों की मशीनें नदियों के जल से चलती थीं। कल-कारखानों की मशीनों को तीव्र गति से चलाने के लिये अधिक शक्ति की आवश्यकता हुई। भाप शक्ति का आविष्कार हुआ। न्यू कामन ने सबसे पहले वाष्प से चलने वाला इंजिन तैयार किया। जेम्सवाट ने 1769 ई. में इस वाष्प चलित इंजिन में सुधार करके उसे अधिक उपयोगी और व्यावहारिक बनाया। 1775 ई. में जेम्सवाट के वाष्प इंजिन बनाने का कारखाना स्थापित हो गया। अब मशीनें, पानी के बजाय भाप से चलने लगीं। पहले वाष्प शक्ति से चलित यंत्रों का उपयोग कारखानों में फिर गाड़ियाँ खींचने और बाद में जहाज चलाने के लिये होने लगा।

2.5.3 लोहे और कोयले की खानें

इंग्लैंड में भाप बनाने के लिये कारखानों में कोयले की आवश्यकता हुई। इंग्लैंड में खानों से कोयला सरलता से प्राप्त हो गया। इससे कोयला उत्खनन उद्योग अस्तित्व में आया और पर्याप्त कोयला निकाला जाने लगा। खानों में काम करने वाले मजदूरों की सुरक्षा के लिये डेवी नामक वैज्ञानिक ने 1815 ई. में एक सेफ्टी लेंप बनाया। इसी बीच कोयले की खानों के पास लोहे की खानें भी मिल गयीं। अब लोहें को गलाने के लिये लकड़ी के कोयले के स्थान पर पत्थर के श्रेष्ठ कोयले का उपयोग होने लगा। 1709 ई. में अब्राहम डर्बी ने जले हुए कोयले से लोहे को पिघलाने का सफल प्रयोग किया। 1760 ई. में जान स्मीटन ने डर्बी द्वारा अविष्कृत विधि में अच्छे सुधार किये और 1784 ई. में हेनरी कोर्ट ने लोहे को पिघलाकर शुद्ध करने की नयी विधि की खोज की। इससे लोहे की कच्ची धातु को मिट्टी से शुद्ध करक सुगमता से पिघलाया और फिर उसका फौलाद बनाया जा सकता था। लोहे की खानों में से मिट्टी मिला हुआ लोहा निकालकर मिट्टी से शुद्ध लोहा अलग करने की पद्धति का विकास हुआ। इसके कुछ समय बाद फौलाद को अधिक मजबूत और साफ बनाने के लिये कई प्रकार की मशीनों का उपयोग होने लगा। लोहे के साथ-साथ निकल, एल्युमीनियम, ताँबा, रांगा आदि वस्तुओं को गलाने और शोधन करने की भी नवीन प्रणालियाँ निकाली गयीं। अब कई प्रकार की मशीनें बनाने के लिये लोहे और फौलाद का उपयोग होने लगा। फलतः लोहे और कोयले की खानों के पास बड़े-बड़े कारखानें बन गये। यांत्रिक इंजीनियरिंग उद्योग के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की मशीनें बनाने और उनके उपयोग के लिए विभिन्न प्रकार के यंत्रों और औजारों का निर्माण हुआ। 1800 ई. में हेनरी माइटले ने लेथ मशीन का निर्माण किया।

1.2.5.4 परिवहन व्यवस्था

18वीं सदी के उत्तर्ार्द्ध में जब माल अधिक मात्रा में बनने लगा तो उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये यातायात के द्रुतगामी साधनों की आवश्यकता हुई। फलतः ब्रिटेनवासियों ने ऐसे साधनों की खोज की। स्काटलैंडवासी जान मेक-एडम ने पक्की सड़कें बनाने की विधि खोज निकाली, जिससे घोड़ागाड़ियों द्वारा आना-जाना सुगम हो गया। थोड़े दिनों के बाद गैस के लेम्प का आविष्कार हुआ। जिससे सड़कों को प्रकाशित करने और खानों में रोशनी पहुँचाने में बहुत सहायता मिली। यातायात और परिवहन के लिये नदियों को काटकर अधिक चैड़ा किया गया और नहरें निकाली गयीं। अब भाप से चलने वाली नावों और जहाजों का निर्माण हुआ। 1802 ई. में भाप से चलने वाली नाव बनायी गयी और 1812 ई. में भाप से चलने वाला जहाज बन गया। इसके बाद जहजों के निर्माण में कई सुधार हुए और 19वीं सदी के अन्त में समुद्र में भाप से चलने वाले बड़े-बड़े जहाज चलने लगे। 1825 ई. में ब्रिटेन से पहला वाष्प चलित जहाज कलकत्ता आया था। 1825 ई. में जार्ज स्टीफन ने भाप से चलने वाला प्रथम रेल इंजिन बनाया और ब्रिटेन में पहली रेलगाड़ी 1825 ई. में स्टाकहोम और डार्लिंग्टन के बीच चली। 1830 ई. में लिव्हरपूल से मेनचेस्टर तक रेल लाइन हो गयी। धीरे-धीरे 1850 ई. तक सारे इंग्लैंड में रेलगाड़ियाँ फैल गयीं। रेलमार्ग और जल मार्ग के बीच आने वाले पर्वतों की बाधाओं को सुरंगों द्वारा दूर करने का प्रारंभ ब्रिडली ने किया। रेल आविष्कारों ने औद्योगिक क्रांति के स्वरूप एवं प्रबलता में सर्वाधिक परिवर्तन किया।

1.2.5.5 बिजली, तार और टेलीफोन

18वीं सदी में माइकेल फेरेडे ने बिजली की क्रांतिकारी खोज की और बाद में अमेरिका के एडिसन ने बिजली के यंत्रों का आविष्कार किया। 1837 ई. में ब्रिटेन में चार्ल्स व्हिटली और अमेरिका में सेमुअल मोर्स ने एक ही साथ बिजली के तारों की सहायता से समाचार भेजने की प्रणाली का आविष्कार किया। 1877 ई. में अलेक्जेंडर ग्राहमवेल ने टेलीफोन का आविष्कार किया। इसके बाद समुद्र के जल के भीतर केबल (तार) डालकर समुद्र के पार दूर देशों को खबर भेजने की प्रणाली भी निकाली गयी। इसी बीच हिल ने इंग्लैंड में डाक के विभाग में सुधार किये और देश-विदेश में सभी स्थानों पर निश्चित दर के टिकटों के पत्र भेजे जाने की प्रणाली आरंभ हुई।

1.2.5.6 पेट्रोल चलित यंत्र

19वीं सदी में पेट्रोल की खोज हुई और पेट्रोल से मोटरें व हवाई जहाज चलने लगे। बिजली की शक्ति से भी अन्य कई मशीनें चलने लगीं। औद्योगिक क्रांति में फिर एव नवीन युग प्रारंभ हुआ। 20वीं सदी के प्रारंभ में मोटर, हवाई जहाज, बेतार का तार और रेडियों के आविष्कार हुए, जिन्होंने औद्योगिक क्रांति में तीव्र गति लाने के लिये अपूर्व सहयोग दिया। आजकल बिजली की शक्ति के स्थान पर अणु शक्ति का उपयोग होने लगा है। इससे भी महान क्रांतिकारी परिवर्तन हुए।

1.2.5.7 कृषि की उत्पादन पद्धति में परिवर्तन

ब्रिटेन में औद्योगिक क्षेत्र में ही नहीं, अपितु कृषि के क्षेत्र में भी बड़े परिवर्तन हुए। कृषि उत्पादन के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान होने लगे। विभिन्न प्रकार के रासायनिक खाद डालने, फसलों को बदल-बदल कर बोने, सिंचाई करने आदि नवीन प्रणालियों से कृषि भूमि की उर्वरता बढायी गयी और कृषि उत्पादन में वृद्धि की गयी। बंजर भूमि जोती गयी और उपज बढ़ायी गयी। कृषि क्षेत्र में टाउनशेड और आर्थर यंग ने महत्वपूर्ण शोध कार्य किये। हल जोतने, बीज बोने, फसलों को काटने, छाँटने आदि के लिये नये-नये यंत्रों का प्रयोग होने

लगा। इससे कृषि कार्य न केवल तीव्र और सरल हो गया, अपितु उत्पादन में भी भारी वृद्धि हुई। फलतः कल कारखानों में बढ़ रही कच्चे माल की मांग को भी पूरा किया जा सका। भेड़ों को पालने और उनकी नस्ल सुधार कर अधिक ऊन उत्पन्न करने में सफल प्रयत्न किये गये। इन प्रयोगों और खोजों से खाद्यान्न और ऊन की उत्पत्ति पहले की अपेक्षा कई गुना बढ़ गयी।

1.2.6 औद्योगिक क्रांति के प्रभाव और परिणाम

1.2.6.1 राजनीतिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.6.1.1 नवीन राजनीतिक विचारधाराएँ

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप नये स्थापित, उद्योग-धंधे और कल-कारखाने धनवानों और पूँजीपतियों के हाथों में आ गये, क्योंकि इसके लिए अधिक धन की आवश्यकता होती थी। इन मिलों और कारखानों में मशीनों द्वारा थोड़े से मजदूरों से अधिक उत्पादन का कार्य होने लगा। इससे उत्पादन तो बढ़ा पर बेरोजगारी और बेकारी बढ़ने लगी, मजदूरी के घटे अधिक और मजदूरी कम होने लगी। अपनी आर्थिक कमियों को पूरा करने के लिये स्त्रियाँ-बच्चे भी काम पर जाने लगे। उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। इससे श्रमिकों में असंतोष बढ़ा, दंगे-फसाद होने लगे, मिलों और कारखानों में झगड़े, होने लगे। अतः लोगों में राजनीतिक चेतना और अधिकारों की भावना उत्पन्न हुई और वे अनुभव करने लगे कि अधिकांश मजदूर और जनता गरीब हैं, परन्तु कारखानों, मिलों और उद्योगों के मालिक, और अधिक धनवान बनते जा रहे हैं। वे मजदूरों का शोषण कर रहे हैं। धीरे-धीरे यह विचारधारा फैलने लगी की उत्पादन के साधन जैसे भूमि, खनिज पदार्थ आदि पूँजीपतियों और उद्योगपतियों की निजी संपत्ति नहीं है, अपितु देश की राष्ट्रीय और सामूहिक संपत्ति है। इसलिये इस पर राज्य का अधिकार होना चाहिए एवं उत्पादन के साधनों और उत्पादित वस्तुओं का उपयोग राज्य के सभी व्यक्तियों के हित में होना चाहिये तथा धन का वितरण भी व्यक्तियों की कार्यशक्ति के अनुसार होना चाहिये। कल-कारखानों, उद्योगों और मिलों को सहकारिता के सिद्धांतों के आधार पर चलना चाहिये। इन सब नवीन लक्षणों को तथा श्रमिकों का पूँजीपतियों द्वारा शोषण देखकर राबर्ट ओवन, सेंट साइमन, लुई ब्लांक और कार्ल माक्र्स जैसे विद्वानों, दार्शनिकों और विचारकों ने सुधार के लिये कुछ नवीन सिद्धांत प्रतिपादित किये। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि समाजवादी, साम्यवादी, समष्टिवादी आदि राजनीतिक सिद्धांतों का जन्म हुआ। इनमें कार्ल माक्र्स के साम्यवाद के सिद्धांतों का खूब प्रभाव पड़ा।

1.2.6.1.2 जागीरदारी का अन्त तथा पूँजीवाद का आरंभ

औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप ब्रिटेन में सामन्तवादी अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे नष्ट हो गयी और उसके स्थान पर पूँजीवादी अर्थव्यवस्था अस्तित्व में आयी। नवीन उद्योग धंधों और कल-कारखानों को स्थापित करने में अत्यधिक धन की आवश्यकता होती थी जो साधारण मनुष्यों या श्रमिकों की शक्ति व सामथ्र्य के बाहर की बात थी। इससे धनवानों ने अपनी पूँजी लगाकर ये कल-कारखाने स्थापित किये। मशीनों से जो अधिक उत्पादन हो जाता था, उससे भी मिलों और कारखानों के मालिक अधिक धनवान होते गये। इससे पूँजीपतियों और मजदूरों के दो विभिन्न वर्गों का प्रादुर्भाव हुआ। श्रमिकों की विवशता का लाभ उठाकर उनसे कम से कम मजदूरी पर अधिक से अधिक देर तक काम लिया जाने लगा। इस पूँजीवादी व्यवस्था में आर्थिक स्वतंत्रता के नाम पर उत्पादन की अनियंत्रित स्पर्धा चलने लगी। इस नवीन अर्थव्यवस्था और स्पर्धा से मालिक और मजदूर वर्गों के मध्य संघर्ष प्रारंभ हो गया।

1.2.6.1.3 उपनिवेशों की स्थापना एवं परस्पर संघर्ष

यूरोप के विभिन्न उद्योग प्रधान देशों और ब्रिटेन ने ज्यों-ज्यों अधिकाधिक वस्तुएँ उत्पन्न कीं, त्यों-त्यों उन्हें विश्व के उन देशों की खोज करना पड़ी जहाँ उनकी बनायी हुई तथा तैयार या उत्पादित वस्तुओं की खपत हो सके तथा जहाँ से उनको कच्चा माल प्राप्त हो सके। इससे उद्योग प्रधान देशों ने विश्व के पिछड़े हुए देशों व भागों में अपने-अपने उपनिवेश स्थापित किये। फलतः यूरोपीय राष्ट्रों में परस्पर उपनिवेशों और सामुद्रिक व्यापार के लिये दीर्घकालीन संघर्ष और युद्ध प्रारंभ हो गये।

1.2.6.1.4 साम्राज्यवाद का वृहत स्वरूप

औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप बढ़ते हुए उत्पादन की खपत के लिये नवीन बाजारों और मंडियों की जरूरत थी और कारखानों में कच्चे माल की आवश्यकता भी थी। अतः यूरोप के प्रमुख औद्योगिक देशों ने अफ्रीका और एशिया में अधिक से अधिक देशों पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहा, जिससे कि उनकी दोनों उपर्युक्त आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाये। इंग्लैण्ड विश्व का प्रथम देश था जिसने कच्चे माल की प्राप्ति के लिये और अपने तैयार माल की खपत के लिये विश्व के प्रमुख देशों की मंडियों पर अपना अधिकार जमाना प्रारंभ कर दिया। 19वीं सदी में फ्रांस, जर्मनी अमेरिका तथा जापान का भी औद्योगिक शक्तियों के रूप में उत्थान हुआ और उन्होने भी विश्व के विभिन्न भागों में मंडियों की तलाश की। वह औपनिवेशिक साम्राज्यवाद की लालसा थी। इससे साम्राज्यवाद की प्रतिस्पर्धा बढ़ी। इस प्रकाश विश्व के पिछड़े हुए देशों में यूरोपीय देशों के उपनिवेश स्थापित हो जाने के कारण विश्व में यूरोप के देशों का साम्राज्यवाद फैल गया और विश्व के सभी महाद्वीप किसी न किसी रूप में यूरोप वालों के हाथ में आ गये। पूँजीवाद के विकास के लिये नये बाजारों की खोज, महाद्वीपों के विभिन्न भू-भागों पर अधिकार और वहाँ अपने साम्राज्य स्थापित करने में यूरोप के राष्ट्र सफल हो गये। पूँजीवाद विकसित होते-होते साम्राज्यवाद में स्थानांतरित हो गया।

1.2.6.1.5 महानगरों का निर्माण एवं राजनीतिक जागृति

विभिन्न खदानों और बड़े कारखानों और मिलों के पास बड़े नगर बस गये। मजदूरी के लिये गाँवों के लोग वहाँ जाकर बस गये। गाँवों की संख्या कम होने लगी और उद्योगों के स्थानों के समीप विशाल नगर बस गये। ऐसे नगरों की निरंतर वृद्धि हो जाने से वहाँ की जनसंख्या बढ़ी, इससे लोगों की दशा बिगड़ने लगी, उनकी विभिन्न समस्याओं में वृद्धि हुई, जैसे आवासों की कमी, गंदी बस्तियों की बाहुल्यता, सफाई और स्वास्थ्य का प्रश्न, अपराध, वृद्धि आदि। इससे उनमें राजनीतिक जागृति हुई। श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये श्रमिक संघो का निर्माण हुआ। इन संघों ने श्रमिकों की भलाई के लिये सरकार के विरूद्ध आंदोलन एवं प्रदर्शन किये। कई देशों में राजनीतिक पार्टियों ने श्रमिकों की माँगों का समर्थन किया। श्रमिकों के हित संवर्धन के लिये उनके अलग राजनीतिक दल बने, जैसे इंग्लैंड में लेबर पार्टी। अंत में श्रमिकों व जनता की दशा सुधारने के लिये अनेक जनतंत्रवादी और सुधारवादी आंदोलन प्रारंभ हुए और बाद में लोगों की दशा को ठीक करने के लिये कई सुधारवादी कानून बनाये गये।

1.2.6.1.6 अस्त्र-शस्त्रों की प्रतिस्पर्धा

औद्योगिक क्रांति के विकास से अनेक देशों ने अपनी सैन्य शक्ति उद्योगों के विकास पर निर्भर कर ली। औद्योगिक देश अधिक धन सम्पन्न होने से, उन्होंने अपनी सेनाएँ और अस्त्र-शस्त्र बढ़ा लिये। उन्होंने नवीन आधुनिक श्रेष्ठ हथियार अधिक मात्रा में बनाये। इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका जैसे औद्योगिक रूप से

विकसित देशों में उनकी सैनिक शक्ति भी श्रेष्ठ होती गयी। विश्व के प्रमुख देशों में अधिक से अधिक विध्वंसकारी शस्त्रों का निर्माण करने और सैनिक श्रेष्ठता प्राप्त करने की एक ऐसी प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हुई जो विश्व के दोनों विनाशकारी युद्धों का मूल कारण बन गयी।

1.2.6.2 आर्थिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.6.2.1 अधिक उत्पादन और धन की वृद्धि

औद्योगिक देशों में मशीनों द्वारा दैनिक जीवन की अनेक वस्तुओं का उत्पादन अधिक हुआ, इन वस्तुओं की बिक्री और व्यापार से औद्योगिक देश अधिक धन सम्पन्न और समृद्ध हो गये। दैनिक जीवन में औद्योगिक क्रांति ने बिजली, पंखे, रेडियो, सुव्यवस्थित निवासगृहों, परिवहन व संचार के आधुनिक साधनों, नवीन चिकित्सा पद्धतियों और औषधालयो, उत्तम वस्त्र आदि ने जीवन में महान परिवर्तन ला दिये। इससे जीवन का स्तर ऊँचा उठ गया।

1.2.6.2.2 व्यापार और कृषि में उन्नति

औद्योगिक क्रांति से वस्तुओं का उत्पादन बड़े पैमाने पर हुआ, यूरोपीय देशों ने आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का निर्माण कर उनको यूरोप से बाहर अन्य देशों को भेजा। इससे आंतरिक और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हुई। इसी प्रकार औद्योगिक क्रांति ने कृषि के विकास मे भी योग दिया। नयी आविष्कृत मशीनों उत्तम बीजों और बढ़िया खाद के उपयोग से कृषि के उत्पादन में वृद्धि हुई।

1.2.6.2.3 ग्रामीण और कुटीर उद्योगों का अंत

नवीन कल-कारखानों और मिलों की वृद्धि के कारण पुराने ग्रामीण उद्योग-धंधें और कुटीर उद्योग नष्ट हो गये। गाँवों के बेकार कारीगर और मजदूर नगरों की ओर जाने लगे और वहाँ जो भी थोड़ी अधिक मजदूरी मिली उसी पर काम करने लगे।

1.2.6.2.4 मजदूरों की समस्याएँ तथा सुधारवादी कानून

विभिन्न कारखानों और मिलों तथा औद्योगिक केन्द्रों के समीप भारी संख्या में मजदूरों की बस्तियाँ बस गईं। मजदूरों की अधिक माँग होने से कारखानों में स्त्रियाँ और बालक काम करने लगे। बढ़ती बेकारी और मजदूरों की संख्या में वृद्धि के कारण मजदूरी की दरें घट गयीं। उद्योगपतियों ने उनकी विवशता का अनुचित लाभ उठाया और मजदूरों का शोषण होने लगा। श्रमिकों से 14 से 18 घंटे काम लिया जाने लगा। छोटे बालक व स्त्रियाँ भी विवश होकर मजदूरी करने लगे। बच्चों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। 7-8 वर्ष के बच्चे प्रातः 5 बजे से रात 8 बजे तक काम करते रहते थे। इससे मजदूरों की और उनके आवास व काम के वातावरण की कई समस्याएँ उत्पन्न हो गयीं। उनकी सोचनीय दशा में सुधार करने के लिये कई कानून बनाने पड़े। ब्रिटेन में 1833 ई. में प्रथम फैक्टरी एक्ट पारित हुआ, जिससे श्रमिकों के काम के घंटे निर्धारित हुए।

1.2.6.2.5 मजदूरों और पूँजीपतियों का संघर्ष

औद्योगिक केन्द्रों और बड़े-बड़े नगरों में श्रमिकों के वर्ग तथा उद्योगपतियों के वर्ग का उदय हुआ। औद्योगिक क्रांति से शोषक उद्योगपतियों और शोषित श्रमिक दो नवीन वर्गों का निर्माण हुआ। उद्योगपतियों द्वारा किये जा रहे शोषण से मजदूरों में वर्ग भावना का उदय हुआ। उनको इस बात का बोध हुआ कि उनकी वास्तविक शक्ति उनकी एकता में ही है। फलतः मजदूर संगठित होने लगे और श्रमिक संघ अस्तित्व में आये। इससे श्रमिक आंदोलन प्रारंभ हुए। मजदूरों और पूँजीपतियों में अपने-अपने हितों, अधिकारों और स्वार्थों को

लेकर भयंकर संघर्ष होने लगे। इससे नवीन आर्थिक और राजनीतिक विचारधाराओं का जन्म हुआ तथा नये सुधार हुए।

1.2.6.2.6 उद्योगों पर शासकीय नियंत्रण

नये-नये कारखानों के निर्माण से कई दुर्गुण फैक्टरी जीवन में उत्पन्न हो गये। इसमें मजदूरों की सामाजिक और आर्थिक दशा दयनीय हो गयी। कई प्रकार की दुर्दशा को सुधारने के लिये कई देशों की सरकारों ने अनेक कानून बनाये और खदानों, कारखानों और नये उद्योग-धंधों पर नियंत्रण करने का काम अपने हाथों में ले लिया।

1.2.6.2.7 नवीन आर्थिक और औद्योगिक संस्थाएँ

औद्योगिक केन्द्रों और व्यापारिक क्षेत्रों में व्यवस्था को ठीक करने के लिये और अच्छा संगठन करने के लिये कई नवीन आर्थिक और औद्योगिक संस्थाओं का निर्माण किया गया - जैसे बैंक, स्टाक मार्केट, शेयर होल्डर्स मार्केट, सहकारी संस्थाएँ आदि। मजदूरों ने भी अपने हितों की रक्षार्थ पूँजीपतियों से संघर्ष करने हेतु अपने ट्रेड यूनियन या औद्योगिक संघ स्थापित किये।

1.2.6.3 सामाजिक प्रभाव एवं परिणाम

1.2.6.3.1 मध्यम वर्ग का विकास और वर्ग संघर्ष

औद्योगिक क्रांति और नवीन उद्योग व्यवसायों के फलस्वरूप समाज में धनी वर्ग, मध्यम वर्ग और श्रमिक वर्ग का जन्म हुआ और इनके पारस्परिक संघर्ष बढ़ने लगे जिससे राजनीतिक, सामाजिक क्षेत्र में क्रांतियाँ हुई और मध्यम वर्ग ने उनका नेतृत्व किया। इस प्रकार वर्ग संघर्ष को खूब प्रोत्साहन मिला और समाजवाद की नवीन विचारधाराएँ प्रकट हुईं

1.2.6.3.2 प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का अंत

कल-कारखानों से गाँवों के कुटीर उद्योग, शिल्पियों के गृह-उद्योग नष्ट हो गये जिससे बेकारी बढ़ गयी और एक स्थान पर परिवार के सभी लोगों को काम, मजदूरी या नौकरी नहीं मिलने से परिवार के लोग बिखर गये और परिवार प्रथा टूट गयी। पहले परिवार आर्थिक इकाई थे। पर अब उनका आर्थिक संगठन नष्ट हो गया। एक ही परिवार के सदस्य अलग-अलग स्थानों पर विभिन्न कल-कारखानों में काम करने लगे। इससे पुरानी सामाजिक व्यवस्था नष्ट हो गयी। सामन्तवादी युग का ढाँचा बिखर गया व मनुष्यों के पारिवारिक संबंध बदल गये।

1.2.6.3.3 औद्योगिक शिक्षा का प्रचार व प्रसार

औद्योगिक दक्षता प्राप्त करने के लिये औद्योगिक और तकनीकी शिक्षा का प्रचार बढ़ा और इससे अप्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक शिक्षा की भी उन्नति हुई।

1.2.6.3.4 नवीन सामाजिक संस्थाएँ

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप आबादी का स्थानांतरण हुआ। औद्योगिक केन्द्रों में और खदानों के आसपास लोग बड़ी संख्या में दूर-दूर से आकर बस गये। खेती का स्थान कारखानों, खदानों और नगरों में विभिन्न कार्यों की मजदूरी ने ले लिया। बड़े नगरों की समस्याएँ बढ़ने लगीं, विभिन्न रोग, अपराध, व्यभिचार, दुराचार, व्यसन, जुआ, चोरी, मारकाट, हिंसा, लम्बी चाल वाले और स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले मकान, तंग गंदी गलियाँ, नालियाँ, सड़कें आदि इन औद्योगिक नगरों की समस्याएँ हो गयीं। समाज के प्रत्येक वर्ग में अशांति और असंतोष फैल गया और धार्मिक तथा नैतिक पतन हुआ। कला साहित्य भी प्रभावित हुए,

सांस्कृतिक जीवन आमूल रूप से परिवर्तित हो गया। इससे जन कल्याण की नवीन विचारधाराएँ और व्यवस्थाएँ कार्यान्वित की जाने लगीं। जीवन के सभी क्षेत्रों में समस्याओं को दूर कर विकास की ओर सक्रिय कदम उठाये जाने लगे।

1.2.6.3.5 नवीन दृष्टिकोण और विचारधाराएँ

औद्योगिक क्रांति के कारण प्राचीन सामाजिक व्यवस्था और रूढ़िवादिता को गहरा आघात पहुँचा। विभिन्न प्रकार की मशीनें, प्रकृति पर मनुष्य की विजय का प्रतीक बन गयीं। यंत्रों के उपयोग और उत्पादन में वृद्धि द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रत्यक्ष अनुभव से भाग्यवाद और अंधविश्वास समाप्त होने लगा। तर्क, विवेक और बुद्धिनिष्ठ वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहन मिला। आवागमन के द्रुतगामी साधनों से विश्व संकुचित होकर छोटा हो गया। इससे विभिन्न देशों में विचारों और ज्ञान-विज्ञान का आदान-प्रदान हुआ।

1.2.7 यूरोप में औद्योगिक क्रांति का प्रसार

ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ और विकास हुआ। पर यह क्रांति ब्रिटेन तक ही सीमित नहीं रहीं ब्रिटेन की औद्योगिक क्रांति की गूंज यूरोप के अन्य देशों में भी ध्वनित हुई। धीरे-धीरे अन्य यूरोपीय देश ब्रिटेन से विभिन्न मशीनों का आयात करने लगे। पहले पश्चिम यूरोप के देशों में औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ हुआ तत्पश्चात पूर्वी यूरोप के देशों में औद्योगिक क्रांति प्रारंभ हुई।

1.2.7.1फ्रांस

फ्रांस में औद्योगिक क्रांति 1815 ई. के बाद शान्तिकाल में प्रारंभ हुई। वस्त्र उद्योग में इंग्लैंड में बनी मशीनों का उपयोग बढ़ा। वस्त्र उद्योग में पावरलूम और कारखानों में भाप वाले इंजनों का उपयोग बढ़ा। 1830 ई. से 1848 ई. की अवधि में फ्रांस में अनेक मशीनों का निर्माण हुआ। कोयले और लोहे के उत्पादन में वृद्धि हुई अनेकानेक वस्तुओं के उत्पादन के लिये मशीनों का उपयोग प्रारंभ हुआ। फ्रांस में 1842 ई. में रेल निर्माण का कार्य प्रारंभ हुआ। 1850 ई. से 1870 ई. की अवधि में फ्रांस में खूब औद्योगिक प्रगति हुई।

1.2.7.2 जर्मनी

जर्मनी में विभिन्न छोटे-छोटे राज्यों के होने से राजनीतिक एकता नहीं थीं, इसलिये जर्मनी में औद्योगिक क्रांति विलंब से हुई। सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ प्रशा में हुआ। वहाँ 1820 ई. में आधुनिक सड़कों का निर्माण हुआ और राईन नदी का उपयोग यातायात के लिये किया जाने लगा। 1840 ई. में रेलों का निर्माण प्रारंभ हुआ। यातायात के साधनों के विकास के कारण कोयला उत्पादन दस गुना बढ़ा। 1870 ई. में जर्मनी के एकीकरण के बाद वहाँ तीव्र गति से औद्योगिक विकास हुआ। कुछ ही वर्षों में जर्मनी यूरोप का प्रसिद्ध औद्योगिक देश ही नहीं बना, अपितु उद्योगों के क्षेत्र में वह ब्रिटेन का प्रबल प्रतिद्वंद्वी बन गया। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि जर्मनी में कच्चे लोहे के विपुल भंडार होने से वहाँ प्रारंभ में लौह-इस्पात उद्योग खूब विकसित हुआ।

1.2.7.3 इटली

1870 ई. में यहाँ एकीकरण के बाद औद्योगिक विकास हुआ। 19वीं सदी के अंत तक इटली में वस्त्र उद्योग, धातु उद्योग और रासायनिक उद्योग का विकास हुआ। इटली में जल विद्युत योजनाएँ विशाल पैमाने पर प्रारंभ की गयीं और उसमें सफलता मिली।

1.2.7.4 रूस

1861 ई. में कृषि दासों की मुक्ति के बाद रूस में औद्योगीकरण प्रारंभ हुआ। 1860 ई. में रूस में स्टेट बैंक की स्थापना की गयी और सरकारी नियंत्रण में अनेक कल-कारखाने स्थापित किये गये। रेलों का निर्माण और विकास हुआ। सूती वस्त्र उद्योग के कारखाने भी खुले। 1892 ई. से 1903 ई. के मध्य रूस में औद्योगिक विकास तेजी से हुआ।

1.2.7.5 बेल्जियम

बेल्जियम में स्वतंत्रता पूर्व ही 1830 ई. में औद्योगिक क्रांति प्रारंभ हो गयी थी।1834 ई. में यहाँ रेल निर्माण और रेल यातायात प्रारंभ हो गया। 1844 ई. तक मुख्य रेलवे लाइनें पूर्ण हो गयीं। इससे यहाँ के औद्योगिक विकास में तीव्रता आयी। यहाँ लघु उद्योगों का बहुत विकास हुआ। लोहे के उत्पादन में बेल्जियम ने प्रसिद्धि पायी। 1870 ई. तक बेलजियम यूरोप का एक प्रमुख औद्योगिक देश हो गया।

1.2.8 सारांश

औद्योगिक क्रान्ति - औद्योगिक क्रान्ति का अर्थ है, उन परिवर्तनों से जिनके अनुसार प्राचीनकाल के सीमित गृह उद्योगों के बदले भाप शक्ति के कारखानों में बड़ी मात्रा में उत्पादन होने लगा। उत्पादन के साधनों में परिवर्तन और उत्पादन में अधिकतम वृद्धि ही औद्योगिक क्रान्ति है। सबसे पहले यह 18वीं सदी में इंग्लैण्ड में हुई। उसके बाद यूरोप और सबसे अन्त में एशिया में आई। औद्योगिक क्रान्ति अकस्मात नहीं हुई, अपितु धीरे-धीरे हुई।

औद्योगिक क्रान्ति सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में होने के कारण

(1) आंतरिक शांति और बाह्य सुरक्षा
(2) इंग्लैण्ड में प्रगतिशील समाज
(3) पूँजी का संचय और आर्थिक दृढ़ता
(4) इंग्लैण्ड का औपनिवेशिक साम्राज्य
(5) उत्कृष्ट नौ सेना
(6) स्वतंत्र विचारों का वातावरण
(7) लोहे व कोयले की पर्याप्त मात्रा
(8))अन्य अनुकूल स्थितियाँ
(9) श्रमिकों की संख्या-वृद्धि

औद्योगिक क्रान्ति के कारण

(1) वस्त्र उद्योग में विविध आविष्कार
(2) वाष्प शक्ति का आविष्कार और यंत्र
(3) लोहे और कोयले की खानें
(4) परिवहन व्यवस्था
(5) बिजली, तार और टेलीफोन
(6) पेट्रोल चलित यंत्र
(7) कृषि की उत्पादन पद्धति में परिवर्तन

औद्योगिक क्रांति के प्रभाव और परिणाम

(1) राजनीतिक प्रभाव एवं परिणाम
(अ) नवीन राजनीतिक विचारधाराएँ
(ब) जागीरदारी का अन्त/पूँजीवाद का आरंभ
(स) उपनिवेशों की स्थापना एवं परस्पर संघष
(द) साम्राज्यवाद का वृहत स्वरूप
(इ) महानगरों का निर्माण एवं राजनीतिक जागृति
(फ) अस्त्र-शस्त्रों की प्रतिस्पर्धा
(2) आर्थिक प्रभाव एवं परिणाम
(अ) अधिक उत्पादन और धन की वृद्धि
(ब) व्यापार और कृषि में उन्नति
(स) ग्रामीण और कुटीर उद्योगों का अंत
(द) मजदूरों की समस्याएँ/सुधारवादी कानून

(इ) मजदूरों और पूँजीपतियों का संघर्ष (फ) उद्योगों पर शासकीय नियंत्रण
(क) नवीन आर्थिक और औद्योगिक संस्थाएँ
(3) सामाजिक प्रभाव एवं परिणाम
(अ) मध्यम वर्ग का विकास और वर्ग संघर्ष (ब) प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का अंत
(स) औद्योगिक शिक्षा का प्रचार व प्रसार (द) नवीन सामाजिक संस्थाएँ
(इ) नवीन दृष्टिकोण और विचारधाराए
यूरोप में औद्योगिक क्रांति का प्रसार
(1) फ्रांस (2) जर्मनी
(3) इटली (4) रूस
(5) बेल्जियम

1.2.9 बोध प्रश्न

1.2.9.1 लघु उत्तरीय प्रश्न

1. औद्योगिक क्रांति से आप क्या समझते हैं ?
2. औद्योगिक क्रांति के उत्प्रेरक कौन से थे?
3. औद्योगिक क्रांति इंग्लैंड में ही प्रारंभ क्यों हुई?
4. औद्योगिक क्रांति के दो प्रमुख कारण बताइये।
5. समाजवादी और साम्यवादी विद्वानों के नाम लिखिये।
6. औद्योगिक क्रांति का साम्राज्यवाद से सम्बन्ध स्थापित कीजिये।
7. औद्योगिक क्रांति के बाद नवीन उपनिवेशों की स्थापना क्यों होने लगीं?
8. औद्योगिक क्रांति के दो आर्थिक परिणाम बताइये।
9. औद्योगिक क्रांति के दो सामाजिक परिणामों का उल्लेख कीजिये।
10. औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप कृषि की उत्पादन पद्धति में क्या परिवर्तन हुए ?

1.2.9.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. औद्योगिक क्रांति से क्या अभिप्राय है? इसके के लिये कौन से उत्प्रेरक उत्तरदायी हैं ?
2. औद्योगिक क्रान्ति के सामाजिक और राजनीतिक परिणामों की विवेचना कीजिये ?
3. औद्योगिक क्रांति सर्वप्रथम इंग्लैंड में क्यों हुई ? कारणों सहित व्याख्या कीजिये।
4. इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रांति का विश्लेषण कीजिये।
5. यूरोप में औद्योगिक क्रांति के प्रसार का वर्णन करिये।
6. औद्योगिक क्रांति के परिणाम और प्रभाव क्या रहे? उनका विश्लेषण करिये।
7. औद्योगिक परिवर्तनों ने आर्थिक और राजनीतिक जीवन पर क्या प्रभाव डाला ?
8. औद्योगिक क्रांति के कारणों की विवेचना कीजिए।
9. औद्योगिक क्रांति का फ्रान्स, जर्मनी इटली तथा रूस में प्रसार का वर्णन करिये।
10. औद्योगिक क्रान्ति के सामाजिक तथा आर्थिक प्रभावों की विवेचना कीजिये।

1.2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कैटलबी, सी.डी.एम.: हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न टाइम्स
2. हेजन, सी.डी.: मॉडर्न यूरोपीयन हिस्ट्री
3. चैहान, देवेन्द्र सिंह: यूरोप का इतिहास (1815-1919)
4. फाइप, सी.एच.: ए हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप
5. गूच, जी.पी.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
6. फिशर, एच.ए.एल.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
7. हेज, जे.एच.: पोलिटिकल एंड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप, भाग 1 एवं 2
8. ग्रान्ट एवं टेम्परले: यूरोप इन दि 19 एंड 20 सेन्चुरीज
9. मेरियट, जे.ए.आर.: इंग्लैंड सिंस वाटइलू
10. मेरियट, जे.ए.आर.: दि ईस्टर्न क्वेश्चन
11. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-1950)
12. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-2000)
13. पान्डेय, धनपति: आधुनिक ऐशिया का इतिहास
14. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक यूरोप का इतिहास
15. वर्मा, दीनानाथ: अंतर्राष्ट्रीय संबंध
16. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक एशिया का इतिहास
17. वर्मा, रमेशचन्द्र: इंग्लैंड का इतिहास
18. सिन्हा विपिन बिहारी: आधुनिक ग्रेट ब्रिटेन
19. मेहता बी. एन.: यूरोप का इतिहास
20. शर्मा एल. पी.: इंग्लैंड का इतिहास
21. चैहान, देवेन्द्र सिंह: समकालीन यूरोप (1919-1950)
22. महाजन वी. डी.: यूरोप का इतिहास (1789-1945)
23. वर्मा लाल बहादुर: यूरोप का इतिहास (भाग 1 एवं 2)
24. दुबे शुकदेव प्रसाद : आधुनिक विश्व का कूटनीतिक इतिहास (भाग 1 एवं 2)
25. नेहरू जवाहरलाल: विश्व इतिहास की झलक

एम. ए. इतिहास - सेमेस्टर ।।

आधुनिक विश्व का इतिहास - भाग 1

खंड - 1 भौगोलिक खोजें एवं औद्योगिक क्रान्ति

इकाई - 3 यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलन और वाणिज्यवाद का विकास

इकाई की रूपरेखा

1.3.1 उद्देश्य
1.3.2 प्रस्तावना
1.3.3 धर्म सुधार आन्दोलन
1.3.4 धर्म सुधार आन्दोलन के कारण
1.3.5 धर्म सुधार आन्दोलन का प्रारंभ
1.3.6 जर्मनी में धर्म सुधार आन्दोलन
1.3.7 धर्म सुधार आन्दोलन की प्रमुख घटनायें
1.3.8 इंग्लैंड में धर्म सुधार आन्दोलन
1.3.9 अन्य राष्ट्रों में धर्म सुधार आन्दोलन
1.3.10 यूरोप में वाणिज्यवाद का विकास
1.3.11 वाणिज्यवाद के विकास के कारण
1.3.12 वाणिज्यवाद के दोष
1.3.13 वाणिज्यवाद के परिणाम और महत्व
1.3.14 सारांश
1.3.15 बोध प्रश्न
1.3.16 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.3.1 उद्देश्य

यूरोप में आधुनिक युग का आरम्भ वहाँ की जन ता के लिये अनेक प्रकार से परिवर्तनों का सूचक है। इसी आधुनिक युग के प्रभाव से उनके धार्मिक विचारों में एक क्रान्ति का उदय हुआ जिसके प्रभाव से यूरोप की भूमि पर धर्म सुधार आन्दोलन का आरम्भ हुआ।

आधुनिक काल के प्रारम्भ में यूरोपीय लोग पूर्वी देशों के सम्पर्क में आये। नवीन समुद्री मार्गों और नये देशों की खोज से यूरोप का वाणिज्य-व्यापार पनप उठा। नवीन उपनिवेश बसाये गये और उनसे भी व्यापार बढ़ा। बैकिंग प्रणाली और मुद्राओं का प्रचलन बढ़ा। इससे यूरोप के वाणिज्य-व्यापार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इसे ''व्यापारिक क्रांति'' या ''वाणिज्यवाद'' कहते हैं। इस वाणिज्यवाद ने स्वर्ण और रजत को अधिकाधिक महत्व दिया। अब धर्म के स्थान पर धन का महत्व अधिक बढ़ गया।

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य यूरोप में हुए धर्म सुधार आन्दोलन और वाणिज्यवाद के विकास की विस्तार से विवेचना करना है।

1.3.2 प्रस्तावना

मध्यकालीन यूरोप में चर्च एक सार्वजनिक कैथोलिक धर्म की संस्था थी जिसका प्रधान पोप होता था। इसकी सत्ता सर्वोपरि थी। कालान्तर में चर्च और पोप दोनों ही भ्रष्ट हो गये। धर्म का स्वरूप व्यावसायिक हो गया और जनता का आर्थिक शोषण होने लगा। अतः चर्च और पोप के विरुद्ध जो आन्दोलन हुआ, वह धर्म सुधार आन्दोलन कहलाता है।

16वीं सदी में व्यापारिक क्रान्ति ने एक नवीन आर्थिक विचारधारा को जन्म दिया। इस नवीन आर्थिक विचारधारा को वाणिज्यवाद कहते हैं। वाणिज्यवाद में व्यापारी वर्ग, व्यवस्थित, सुनिश्चित और नियमित वाणिज्य-व्यापार और सोने-चाँदी की प्राप्ति और संगठन पर अधिक बल दिया गया। ''अधिक स्वर्ण प्राप्त कर अधिक बलशाली बनो'' यह वाणिज्यवाद का नारा था।

प्रस्तुत इकाई में धर्म सुधार आन्दोलन की व्याख्या करते हुए उसके कारणों, घटनाओं, प्रमुख प्रोटेस्टेंट मार्टिन लूथर एवं यूरोप के अन्य देशों में इसके प्रसार की विस्तृत विवेचना की जाना प्रस्तावित है। साथ ही वाणिज्यवाद का अभिप्राय, उसके लक्षण, विकास के कारण तथा उसके दोषों का वर्णन भी प्रस्तावित है। इकाई के अन्त में पाठ का सारांश, बोध प्रश्न एवं संदर्भ ग्रन्थ सूची भी रेखांकित होगी।

1.3.3 धर्म सुधार आन्दोलन

1.3.3.1 अभिप्राय

यूरोपीय जनता के धार्मिक विचारों में उत्पन्न क्रान्ति का परिणाम धर्म सुधार आन्दोलन के नाम से प्रसिद्ध है। इसे धार्मिक विरोध के नाम से भी पुकारा जाता है। यह आन्दोलन कैथोलिक धर्म की कुरीतियों, चर्च के आडम्बरों, पोप के रूढ़िवादी धार्मिक नियमों और पादरियों तथा अन्य धर्माधिकारियों के भ्रष्ट और पतित जीवन के विरोध में चलाया गया था। इसीलिए इसे 'धर्म सुधार आन्दोलन' और इसके समर्थकों को प्रोटेस्टेंट कहते हैं। इस आन्दोलन का अन्तिम लक्ष्य पोप के प्रभाव का अन्त करना और राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्रीय चर्च की स्थापना करना था।

1.3.3.2 इतिहासकारों के मत

प्रसिद्ध इतिहासकार ग्राण्ट ने धर्म सुधार आन्दोलन की व्याख्या करते हुए लिखा है -
'इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप जनता के धार्मिक जीवन का पुनर्जन्म हुआ और पोप के अधिकारों का विरोध करने के कारण इसे राजनीतिक रूप की प्राप्ति भी हुई''

प्रसिद्ध इतिहासकार फिशर ने इस आन्दोलन के विषय में अपने विचार व्यक्त किये है – ''धर्म सुधार आन्दोलन साधारण रूप से उस आन्दोलन को कहा जाता है जिसका प्रारम्भ 16वीं शताब्दी में हुआ था और जिसके कारण यूरोप के अनेक राष्ट्र रोम के चर्च से पृथक हो गये थे।''

इतिहासकार शेविल के शब्दों में - ''यह एक दोहरा आन्दोलन था जिसका उद्देश्य चर्च के जीवन को पवित्र और सरल बनाना तथा पोप के प्रभाव को चर्च के ऊपर से कम करना था।''

1.3.4 धर्म सुधार आन्दोलन के कारण

धर्म सुधार आन्दोलन एक दोहरा आन्दोलन था जिसमें धार्मिक और राजनैतिक तत्व मिले हुए थे। इसके प्रमुख कारणों की व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है -

1.3.4.1 धार्मिक कारण

रोमन कैथोलिक धर्म में अनेक आंतरिक कमियाँ थीं जिनके कारण ईसाई जनता कैथोलिक धर्म के प्रति उदास बन गई थी। मध्य युग में कैथोलिक धर्म की सबसे प्रमुख विशेषता ईसाई जगत को संगठित करके उसमें एकता की स्थापना करना थी, परन्तु नवयुग का आरम्भ होते-होते पोप के जीवन में भ्रष्टता और धन के प्रति मोह उत्पन्न हो गया था जिसके कारण वह सभी प्रकार के धार्मिक कृत्यों के सम्पादन के समय 'कर' के रूप में जनता से धन प्राप्त करके उस धन राशि को अपने भ्रष्ट जीवन के लिये व्यय करने लगा। पोप के इस प्रकार के कामों से कैथोलिक धर्म में विविध प्रकार की दुर्बलतायें उत्पन्न हो गईं और ईसाई जनता कैथोलिक धर्म को अनादर की दृष्टि से देखने और पोप के कार्यों का विरोध करने लगी। उस समय के बड़े यूरोपीय सम्राट पोप के अनुचित आदेशों से बड़े परेशान हो गये थे। अतः उन्होंने भी जनता के विरोध को सफल बनाने का प्रयास किया। धार्मिक कारणों में एक उल्लेखनीय कारण पोपशाही का विभाजन और आपसी मतभेद भी था। 14वीं शताब्दी से पूर्व पोप की गद्दी एविगनॉन (फ्रान्स) में थी और पोप पर फ्रांस का पूरा प्रभाव रहता था, परन्तु 1378 ई. में पोप की एक दूसरी गद्दी की स्थापना रोम में की गई। इस प्रकार कैथोलिक जनता के लिये अब एक के स्थान पर दो पोपों की आज्ञा मानना आवश्यक हो गया, परन्तु दोनों पोप आपस में मिलकर रहने के बजाय एक दूसरे के आदेशों की आलोचना करने लगे जिसके कारण ईसाई जनता की दृष्टि में पोप का आदर और मान कम होने लगा। फलतः पोप जनता की श्रद्धा के भाजन नहीं रहे।

1.3.4.2 आर्थिक कारण

इस काल में चर्च के पास करों के रूप में एकत्रित अपार धन-राशि थी। इस धन को ईसाई जनता की भलाई के लिये व्यय न करके पोप अपने विलासी जीवन के लिये सुख साधन एकत्रित करने में खर्च कर डालता था। अतः जनता की श्रद्धा और विश्वास उस पर से उठ गये। वह 'धर्म कर' (दशमाँश) के रूप में जनता की आय का दशम् भाग तथा विभिन्न संस्कारों के सम्पन्न कराने में भी धन वसूल करता था। इसके अतिरिक्त पादरियों और अन्य धर्माधिकारियों की नियुक्ति भी वह उन्हीं व्यक्तियों में से करता था, जो उसे सबसे अधिक धन दे सकते थे। दोषी व्यक्तियों के अपराधों को धन के बदले क्षमा कर दिया जाता था। अतः धर्म का आधार उस काल में धन बन गया था जिसके कारण उसके विरोधियों की संख्या में वृद्धि होने लगी। पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप नवीन उद्योग धन्धों और व्यापार व व्यवसाय के लिये भारी धनराशि की आवश्यकता पड़ने लगी। मध्य युग में इनकी अनुपस्थिति के कारण जनता का धन के प्रति मोह नहीं था, परन्तु अब उसे धन संचय की आवश्यकता पड़ने लगी थी जिसके कारण यह स्वाभाविक ही था कि जनता पोप की धन-लोलुपता का विरोध करती।

1.3.4.3 सांस्कृतिक कारण

नवीन आविष्कारों के प्रभाव से शासकों की शक्ति में अत्यधिक वृद्धि हुई जिससे वे पोप का विरोध करने में स्वयं को शक्तिशाली अनुभव करने लगे। छापेखाने के आविष्कार से चर्च और पोप की कटु आलोचना से पूर्ण पुस्तकें भारी संख्या में प्रकाशित की जाने लगीं। इन पुस्तकों ने जनता के अन्ध-विश्वास का अन्त कर दिया। यूनानी विद्वानों ने चर्च, पोप और धर्माधिकारियों का विरोध करना आरम्भ किया। इस प्रकार नवीन संस्कृति और सभ्यता के विकास ने धर्म सुधार आन्दोलन को प्रभावपूर्ण बनाने में प्रमुख भाग लिया। मार्डन कैब्रिज हिस्ट्री ने इसका अनुमोदन निम्न शब्दों में किया है-'विद्वानों के लेखों ने धर्माधिकारियों और पादरियों की मूर्खता और अज्ञानता का भण्डाफोड़ किया तथा उनकी सांसारिक भोगविलास में लिप्त रहने की

प्रवृत्ति का जनता को ज्ञान कराया। इन सबके परिणामस्वरूप कैथोलिक चर्च का जनता की दृष्टि में पहले जैसा मान-सम्मान नहीं रहा।''

1.3.4.4 विद्वानों की कृतियाँ

इरैस्मस ने एक पुस्तक ''मूर्खता की प्रशंसा'' नाम से प्रकाशित कराई और उसने चर्च में उत्पन्न कुरीतियों की काट की। उसने यूनानी भाषा में 'न्यू टेस्टामेंट' का प्रकाशन कराया। इसी प्रकार मार्टिन लूथर ने जर्मनी में कैथोलिक धर्म का बहुत अधिक विरोध किया जो जर्मनी की रियासतों में पोप के अधिकारों के लिये बड़ा घातक सिद्ध हुआ। उसका यह विरोध पोप द्वारा जमा की गई धनराशि को अपनी सुख वृद्धि के लिये व्यय करने और धर्माधिकारियों की मनमानी पर बड़ा अनिष्टकारी प्रहार था। इसी प्रकार यूरोप के विभिन्न देशों में अनेक विद्वानों ने पोप के विरोध में अपने पत्र, लेख, और ग्रन्थ प्रकाशित कराये। फ्रांस में कोर्नील, रेबेलेस, इंग्लैंड में बर्क, स्पेन्सर, चॉसर, जॉन विक्लिफ, स्पेन में सर्वेन्टीज, इटली में पेटार्क और बोहेमिया में जॉन हस आदि लेखकों ने अपनी भाषा में अनेक लेख और पुस्तकें लिखीं जिन्होंने जनता को धार्मिक त्रुटियों एवं दोषों, धर्माधिकारियों की मूर्खताओं व पोपशाही के अनाचारों की जानकारी कराई।

1.3.4.5 राजनीतिक कारण

यद्यपि यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि धर्म सुधार आन्दोलन का आरम्भ पूर्णतः एक धार्मिक आन्दोलन के रूप में हुआ था, परन्तु इस आन्दोलन का क्रमशः विस्तार होता गया और विविध दिशाओं और क्षेत्रों से इसमें सहयोग की प्राप्ति होने लगी। राष्ट्रीयता की भावना के उत्पन्न होने से यूरोप निवासी पोप के राजनीतिक प्रभाव के भी विरोधी बन गए। पोप का राजनीतिक क्षेत्र में प्रभाव समस्त महाद्वीप पर बड़े-बड़े सम्राटों से भी अधिक था जिसका सर्वोत्तम उदाहरण हेनरी चतुर्थ है। पोप ने किसी बात पर रुष्ट होकर सम्राट हेनरी चतुर्थ की देश से निर्वासित किये जाने का दण्ड दिया। हेनरी चतुर्थ भी भीषण सर्दी के दिनों में बराबर तीन दिन और तीन रात नंगे पाँव पोप के महल के द्वार पर खड़ा रहा तब पोप ग्रेगरी सप्तम का क्रोध शांत हुआ और हेनरी चतुर्थ को क्षमा प्राप्त हुई। अतः राजा महाराजाओं ने भी पोप के विरोधियों को सहयोग और समर्थन देना आरम्भ कर दिया।

इसके अतिरिक्त पोप ने अपनी आय की वृद्धि के लिये टाइथ (दशमाँश), धर्म कर तथा इसी प्रकार के अन्य धार्मिक कर, जो पहले से ही पर्याप्त मात्रा में बढ़े हुए ईसाई जनता पर भार डाल रहे थे और बढ़ा दिये। अतः जनता में पोप के प्रति असन्तोष बढ़ने लगा और वह धर्म सुधार आन्दोलन में रुचि लेने लगी।

1.3.4.6 तत्कालिक कारण

धर्म सुधार आन्दोलन का तत्कालीन कारण क्षमापत्रों का पोप द्वारा बेचने की व्यवस्था करना था। पोप लियो दशम की नवीन भवनों तथा थियेटर कक्ष निर्माण में विशेष रुचि थी। अतः इन कार्यों को पूरा करने के लिये उसने क्षमापत्र बेचकर धन एकत्रित करने की विधि अपनाई। उसने अनेक व्यक्तियों को क्षमा-पत्र बेचने के लिए नियुक्त करके यूरोप के विभिन्न देशों में भेजा। इस व्यवस्था ने दूर देशों की धार्मिक जनता को उन्हीं के स्थान पर वे सुविधायें प्रदान कीं जिनके लिए भाँति-भाँति के कष्ट सहन करके पोप के दरबार में पहुँचती थी। जो व्यक्ति इस प्रकार क्षमापत्र निर्धारित व्यक्ति से खरीद लेता था उसके सभी प्रकार के अपराधों को क्षमा करके ईश्वर उसके लिए स्वर्ग का द्वार खोल देता था। अनेक विद्वानों के विचार में पोप के इस अनुचित कार्य से यूरोप में अपराधियों की अपराध वृत्ति को प्रोत्साहन प्रदान किया जाने लगा। जर्मनी में मार्टिन लूथर ने पोप के इस कार्य का डटकर विरोध किया। उसी का अनुकरण करके अन्य देशों में भी अनेक विद्वान्

और धर्म-सुधारक पोप का विरोध करने लगे। इतिहासकार शेविल के शब्दों में -''क्षमा-पत्रों की बिक्री ही चर्च के विरोध का तत्कालीन कारण थी। मार्टिन लूथर ने अपने प्रसिद्ध 95 धार्मिक सिद्धान्तों की सूची तैयार की जिसमें क्षमा-पत्रों की बिक्री का विरोध भी सम्मिलित था। इस प्रकार पोपशाही के विरुद्ध धर्म सुधार आन्दोलन आरम्भ हुआ।''

1.3.5 धर्म सुधार आन्दोलन का प्रारंभ

1.3.5.1पोप का विरोध और आन्दोलन का आरम्भ

14वीं शताब्दी में ही पोप के अधिकारों, उसकी धार्मिक नीति तथा कैथोलिक धर्म में उत्पन्न दोषों और त्रुटियों की चर्चा जनसाधारण में होने लगी थी। अंग्रेज पादरी जॉन वाइक्लिफ ने ही सबसे पहले कैथोलिक धर्म में उत्पन्न बुराइयों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया। उसने इन त्रुटियों और दोषों के लिये कैथोलिक धर्म के महान् गुरू पोप की भी आलोचना की। उसके प्रचार से प्रभावित होकर बोहेमिया में प्राग विश्वविद्यालय के प्राध्यापक जॉन हस ने भी विक्लिफ के सिद्धान्तों को उचित बताते हुए पोप के विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया, परंतु उस समय की शक्ति और अधिकार असीमित थे। किसी यूरोपीय शासक में उसका विरोध करने का साहस नहीं था। अतः पोप के विरुद्ध उठाये गये उन धार्मिक आन्दोलनों को पूरी तरह दबा दिया गया, फिर भी इन आन्दोलनों का एक परिणाम यह अवश्य निकला कि लोगों की विचारधारा में परिवर्तन उत्पन्न होने लगा और वे पोप के भ्रष्टाचार, धार्मिक आडम्बरों, धार्मिक करों की अधिकता आदि का विरोध करने लगे। इस प्रकार का विरोध जर्मनी में ही सबसे पहले आरम्भ हुआ और वहीं इसे सबसे अधिक समर्थन प्राप्त हुआ।

1.3.6 जर्मनी में धर्म सुधार आन्दोलन

1.3.6.1धर्म सुधार आन्दोलन जर्मनी में ही क्यों?

यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा जर्मनी में ही धार्मिक आन्दोलन को क्यों सफलता प्राप्त हुई यह एक विचारणीय प्रश्न है। इसका समुचित उत्तर उस काल की जर्मनी की राजनीतिक दशा में निहित है। उस समय फ्रांस और पवित्र रोमन साम्राज्य दोनों देश कैथोलिक धर्म के कट्टर समर्थक थे। ये दोनों ही देश धार्मिक आन्दोलन का अन्त करने के लिये पर्याप्त मात्रा में शक्तिशाली थे, परन्तु धार्मिक आन्दोलन के सौभाग्य से दोनों देशों में उस समय युद्ध ही रहा था। अतः वे परस्पर मिलकर धार्मिक आन्दोलन का दमन करने में असमर्थ थे। उधर जर्मनी की राजनीतिक दशा धार्मिक आन्दोलन के विकास के लिए सर्वथा अनुकूल थी। जर्मनी उस समय अनेक छोटे-छोटे राज्यों का संघ मात्र था। रोमन सम्राट संघ की स्वीकृति लिये बिना कोई प्रभावपूर्ण पग बढ़ाने मे असमर्थ था। वह न तो सेना ही संगठित कर सकता था और न आय बढ़ाकर आन्दोलन का दमन करने के लिये आय वृद्धि ही कर सकता था। ऐसी स्थिति में लूथर ने जर्मनी में धार्मिक आन्दोलन आरम्भ किया। जर्मनी के अनेक राज्यों में लूथर के आन्दोलन को कल्याणकारी जान कर उसका सर्मथन किया और लूथर को हर प्रकार की सहायता प्रदान की गई। इस प्रकार जर्मनी में धार्मिक आन्दोलन को पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त हुई। इतिहासकार ए. जे. ग्राण्ट ने धार्मिक आन्दोलन के जर्मनी में विकसित होने के सम्बन्ध में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं - ''धार्मिक आन्दोलन प्रारम्भ में एक अति साधारण घटना थी, परन्तु शीघ्र ही यह आन्दोलन जर्मनी की राजनीतिक और सामाजिक दशा एवं यूरोपीय देशों के अन्तर्राष्ट्रीय

सम्बन्धों के कारण, एक उलझन भरी समस्या का रूप धारण कर गया। लूथर का धार्मिक आन्दोलन प्रगति पथ पर आगे बढ़ने लगा। उसे उस काल के तथा आगामी शताब्दी में घटित होने वाले षड्यंत्रों, राजनीतिक ईष्र्या, कूटनीति, गृह युद्धों और अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों से बड़ी सफलता प्राप्त हुई।''

इतिहासकार शेविल ने जर्मनी के विषय में लिखा है - ''जर्मनी केवल नाम के लिये ही एक साम्राज्य था। वास्तव में वह छोटे-छोटे राज्यों का एक संघात्मक संघ था जो पोप के हस्तक्षेप का विरोधी था।'' पवित्र रोमन सम्राट इन छोटे-छोटे स्वतन्त्र राज्यों के कार्य कलापों में हस्तक्षेप करने में असमर्थ था। इसके अतिरिक्त छापेखाने की कला का विकास भी जर्मनी में ही हुआ था और धर्म सुधार आन्दोलन के प्रारम्भ होने से पूर्व ही जर्मन भाषा में बाइबिल के 15 संस्करण प्रकाशित होकर जनता में बिक चुके थे। अतः जनता धार्मिक ग्रन्थों की अनेक त्रुटियों से उस समय तक भली भाँति परिचित हो चुकी थी। इसीलिये जब धर्म सुधारकों ने कैथोलिक चर्च और पोप की अनेक बुराइयों और त्रुटियों की कटु आलोचना प्रारम्भ की तो जर्मन जनता ने उन कटु आलोचनाओं का स्वागत करते हुए धर्म सुधार आन्दोलन को अपना समर्थन पूर्णरूप से प्रदान किया। पवित्र रोमन सम्राट चार्ल्स पंचम उस समय अपने वैदेशिक संघर्षों में इतनी बुरी तरह फँसा हुआ था कि उसे इस आन्दोलन की ओर ध्यान देने का समय ही नहीं था। अतः धर्म सुधार आन्दोलन जर्मनी में प्रारम्भ होकर अपना प्रभाव चारों ओर फैलाने लगा।

1.3.6.2 मार्टिन लूथर

मार्टिन लूथर का जन्म 1483 ई. में आइसलेबेन में हुआ था। उसने एरफर्ट विश्वविद्यालय से कानून और धर्म की शिक्षा में उपाधि प्राप्त की। उसने बर्टेम्बर्ग विश्वविद्यालय में भी धर्मशास्त्र के अध्यापक के पद पर कार्य किया था। इस पद पर कार्य करते समय उसके हृदय में कैथोलिक धर्म एवं शास्त्रों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की शंकाएँ उत्पन्न हुई थीं। इन्हीं शंकाओं के समाधान तथा पोप और रोम के चर्च के दर्शनों की इच्छा से उसने 1505 ई. में रोम की यात्रा की। वहाँ उसने पादरियों के भ्रष्ट जीवन तथा पोप के दरबार में फैले हुए भ्रष्टाचार को देखा। इन दृश्यों ने उसकी धार्मिक आस्था को गहरी ठेस पहुँचाई। उसने उसी समय भ्रष्टाचार और कैथोलिक धर्म में व्याप्त बुराइयों को दूर करने के लिये एक धार्मिक आन्दोलन प्रारम्भ करने का निश्चय किया। इसके उपरान्त 1517 ई. में बर्टेम्बर्ग में एक व्यक्ति टैटजिल क्षमापत्रों को बेचता हुआ आया। उसका कथन था कि ''पोप के आदेश से इन क्षमापत्रों की बिक्री रोम में सेंट पीटर के गिरजाघर के पुनर्निर्माण के लिये धन संग्रह के लिये की जा रही थी। इन क्षमापत्रों को जो व्यक्ति खरीदेगा उसके सभी पाप कर्मों के लिये ईश्वर उसे क्षमा प्रदान करेगा और मृत्यु के बाद वह सीधा स्वर्ग जायेगा। ''इस प्रकार जिसका जितना बड़ा अपराध अथवा पाप होता था उससे उतना ही अधिक धन क्षमापत्र के मूल्य के रूप में प्राप्त किया जाता था। पोप के इस कार्य से अपराधियों को अपराध करने और उनकी क्षमा के लिये पोप को धन देने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता था। इस तरह अपराध वृत्ति को पोप द्वारा प्रोत्साहन प्रदान करना लूथर को अत्यन्त अनुचित प्रतीत हुआ। उसने ही सबसे पहले इन क्षमापत्रों की बिक्री और पोप की इस प्रवृत्ति का विरोध करते हुये अक्टूबर 1517 ई. में बर्टेम्बर्ग के गिरजाघर के द्वार पर 95 अकाट्य तर्कों की एक सूची लटका दी। इनके द्वारा उसने पोप के क्षमापत्रों की बिक्री एवं इसी प्रकार के अन्य कार्यों का विरोध किया था। लूथर के इन तर्कों ने जर्मन जनता को बहुत प्रभावित किया। हेज ने लूथर के विरोध का महत्व दर्शाते हुए लिखा है कि ''1517 ई. में क्षमापत्रों के विरोध में लूथर द्वारा प्रस्तुत किये गये 95 अकाट्य तर्कों ने जर्मनी में पोप और उसके कैथोलिक धर्म के विरुद्ध देश व्यापी विरोध उत्पन्न किया और प्रोटेस्टेंट चर्च की स्थापना को सुगम बनाया।''

1.3.6.3 पोप द्वारा लूथर का विरोध

मार्टिन लूथर के विरोध में रुष्ट होकर पोप लियो दशम् ने 1520 ई. में लूथर को धर्म का शत्रु घोषित किया। लूथर ने पोप के क्रोध की चिन्ता न करते हुये पोप के उस घोषणा पत्र को बर्टेम्बर्ग की सड़क पर जन-समूह के सम्मुख जला दिया और जनता को पोप के विरुद्ध आन्दोलन करने के लिये उत्साहित करते हुए कहा है कि ''अब सुधार के लिये धार्मिक क्रान्ति के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग शेष नहीं रहा है।'' जर्मन जनता ने लूथर के आन्दोलन का स्वागत किया और लूथर के समर्थकों की संख्या द्रुतगति से बढ़ने लगीं।

1.3.6.4 वर्म्स की परिषद

पोप ने जर्मनी के शासकों को लूथर को दण्ड देने के लिये आदेश दिया तथा कुछ कट्टर कैथोलिकों ने भी लूथर का विरोध किया। पवित्र रोमन सम्राट चार्ल्स पंचम ने वर्म्स नगर में लूथर को अपने दरबार में उपस्थित होने का आदेश दिया। लूथर के साथियों ने उसे दरबार में न जाने का परामर्श दिया, परन्तु लूथर ने अपने प्राणों की परवाह न करते हुए चार्ल्स के दरबार में उपस्थित होने का निश्चय किया। दरबार में चार्ल्स ने लूथर को अपना आन्दोलन और पोप का विरोध स्थगित करने के लिये कहा। लूथर ने उस आदेश को न मानते हुए कहा कि ''मैं यहाँ उपस्थित हूँ। इसके अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं कर सकता, भगवान मेरी रक्षा करें।'' सम्राट चार्ल्स पंचम ने यह सुन कर लूथर को नास्तिक घोषित करके उसे राज्य की सुरक्षा से वंचित कर दिया।

1.3.6.5 मार्टिन लूथर का उत्कर्ष

सुरक्षा से वंचित होकर लूथर के जीवन के लिये भीषण संकट उत्पन्न हो गया। अतः उसे अपने समर्थक सेक्सनी के शासक के यहाँ शरण लेनी पड़ी। सेक्सनी के शासन फ्रेडिक ने उसे बर्टेम्बर्ग के दुर्ग में स्थान दिया। दुर्ग में रहते हुए लूथर ने बाइबिल का जर्मन भाषा में अनुवाद किया जो जर्मनी में बड़ी लोकप्रिय हुई। सम्राट चार्ल्स पंचम यद्यपि लूथर से बुरी तरह रुष्ट था और उसे दण्डित करना चाहता था, परन्तु अपनी वैदेशिक समस्याओं में वह इतना उलझा हुआ था, कि वह लूथर के विरुद्ध कोई प्रभावपूर्ण कार्यवाही करने में असमर्थ रहा। नूरेम्बर्ग नामक स्थान पर 1552 ई. में एक सभा लूथर का विरोध करने के लिये बुलाई गई, किन्तु उस सभा में लूथर विरोधियों की अपेक्षा समर्थकों की संख्या कहीं अधिक थी। अतः लूथर के कार्यों के विरोध में प्रस्ताव पास नहीं हो सका, इसके अतिरिक्त उस सभा की यह बड़ी विशेषता रही कि उसमें लूथर के आन्दोलन के समर्थन में प्रस्ताव पास किया गया। उस प्रस्ताव के पास हो जाने के कारण लूथर का आन्दोलन राष्ट्रीय आन्दोलन बन गया। थेचर ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि -

''नूरेम्बर्ग के प्रस्ताव ने पोप के विरुद्ध जर्मनों की शिकायतों का प्रदर्शन किया तथा लूथरवाद को राष्ट्रीय रूप प्रदान किया।''

1.3.6.6 मार्टिन लूथर के सिद्धान्त

मार्टिन लूथर ने कैथोलिक धर्म की बुराइयों को दूर करने तथा धर्म -सुधार के अभिप्राय से एक नवीन विचारधारा का प्रचार किया। यही विचारधारा कलान्तर में ''प्रोटेस्टेंट'' कहलाई। मार्टिन लूथर के अनुसार पोप को मानव जाति के पाप क्षमा करने का अधिकार नहीं है। बाइबल के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्मों के आधार पर मोक्ष पाने का अधिकार है। अपने सिद्धान्तों की लूथर ने निम्न प्रकार की व्याख्या की थी -

(1) बाह्य आडम्बर का त्याग

मार्टिन लूथर ने बाह्य आडम्बर, उपवास प्रायश्चित और तीर्थ-यात्रा आदि को धार्मिक व्यक्ति के लिये अनावश्यक बतलाया।

(2) परमेश्वर में आस्था

पापों के प्रायश्चित के लिये लूथर ने ईश्वर में आस्था का होना आवश्यक बताया। उसका कथन था कि ईश्वर में दृढ़ विश्वास ही मनुष्य को पापों से मुक्ति दिलाने का सर्वोत्तम साधन है। पोप के क्षमा-पत्रों द्वारा पापों की मुक्ति न होकर केवल पोप के कोष में वृद्धि होती थी।

(3) पुरोहितों का विरोध

लूथर का कथन था कि प्रत्येक ईसाई जिसका बपतिस्मा हो चुका है, स्वयं एक पुरोहित है। पुरोहितों के विवाह करने के अधिकार का वह समर्थक था।

(4) राष्ट्रीय चर्च का समर्थक

लूथर धर्माधिकारियों के विशेष अधिकारों का विरोधी था। वह पोप की सत्ता को अस्वीकार करते हुए बाइबिल में आस्था रखता था। धर्मदान को व्यक्ति का प्रमुख कत्र्तव्य मानता था तथा राष्ट्रीय चर्च की स्थापना का समर्थक था।

(5) संस्कारों की अधिकता का विरोध

वह जन्म, प्रायश्चित एवं पवित्र भोज के संस्कारों को ही स्वीकार करते हुए अन्य सभी संस्कारों को अनावश्यक समझता था।

(6) ईश्वर की कृपा में दृढ़ विश्वास

लूथर का ईश्वर की कृपा और दया में अटूट विश्वास था। अतः वह संसार त्याग कर साधु बनना, ईश्वर की प्राप्ति के लिये अनिवार्य नहीं मानता था। उसका कहना था कि प्रत्येक मनुष्य अपने दैनिक कार्यों को करते हुए तथा दया और परोपकार की भावना का पालन करते हुए, स्वयं को ईश्वर का कृपा पात्र बना सकता है और मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

(7) सेवा एवं शांति में विश्वास

लूथर दीन-दुखियों की सेवा तथा शान्तिपूर्ण साधनों को ईश्वर की प्राप्ति का प्रमुख साधन मानता था। फिशर के शब्दों में ''वह स्वयं धार्मिक क्रान्ति का जन्मदाता था, परन्तु स्वयं क्रान्तिकारी नहीं था।''

1.3.7 धर्म सुधार आन्दोलन की प्रमुख घटनायें

1.3.7.1 कृषक आन्दोलन

दक्षिणी जर्मनी में जमींदारों द्वारा कृषकों पर अत्याचार किये जाते थे। अतः कृषकों ने लूथर के धर्म-सुधार आन्दोलन से प्रोत्साहित होकर 1524 ई. में जमीदारों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। जमींदारों ने उस विद्रोह का दमन करना प्रारम्भ किया। मार्टिन लूथर शान्तिपूर्ण साधनों का समर्थक होने के कारण कृषकों के विद्रोह का विरोधी बन गया। लूथर के इस अप्रत्याशित व्यवहार ने कृषक उसके विरोधी बन गये। परिणामस्वरूप विद्रोह तो शान्त हो गया, परन्तु दक्षिणी जर्मनी की अधिकांश जनता कैथोलिक मत की समर्थक और लूथर की विरोधी बन गई। इस प्रकार जर्मनी धार्मिक आन्दोलन की दृष्टि से दो क्षेत्रों में विभक्त हो गया। उत्तरी क्षेत्र को इस विभाजन से गहरा आघात पहुँचा।

1.3.7.2 प्रोटेस्टेंट मत की स्थापना

1526 ई. में स्पीयर नामक स्थान पर जर्मनी के राजकुमारों और शासकों की एक सभा धार्मिक संघर्ष के सम्बन्ध में आयोजित की गई किन्तु किसी भी निर्णय पर नहीं पहुँचा जा सका। अतः यह निश्चित किया गया कि जब तक साधारण सभा इस सम्बन्ध में अपना निर्णय न दे उस समय तक जर्मनी के विभिन्न राज्य धर्म के सम्बन्ध में अपनी इच्छानुसार व्यवहार कर सकते हैं। 1529 ई. में दूसरी बार सभा बुलाई गई जिसमें कैथोलिकों और लूथर के अनुयाइयों में तीव्र वाद-विवाद हुआ। कैथोलिकों ने लूथर के विरोध में वर्म्स की सभा के निर्णय के अनुसार प्रस्ताव पास करना चाहा जिसका लूथरवादियों ने घोर विरोध किया। घोर विरोध के कारण ही लूथरवादी उस समय से प्रोटेस्टेंट तथा उनका धर्म प्रोटेस्टेंट कहलाने लगा। विलियम स्टब के शब्दों में - ''स्पीयर की सभा के विरुद्ध लूथर के समर्थकों ने भारी विरोध किया। इसी विरोध के कारण लूथर के समर्थक प्रोटेस्टेंट कहलाने लगे।''

1.3.7.3 श्मालकाल्डेन संघ का निर्माण

पवित्र रोमन सम्राट चार्ल्स पंचम प्रोटेस्टेंटों का घोर विरोधी था। अतः उसके विरोध से अपनी रक्षा करने के लिये उत्तरी जर्मनी के लूथरवादी राज्यों ने परस्पर मिलकर 1531 ई. में श्मालकाल्डेन संघ का निर्माण किया। इस संघ के सदस्यों में सेक्सनी ब्राण्डेन्बर्ग और हेस प्रमुख थे।

1.3.7.4 मार्टिन लूथर का स्वर्गवास

1546 ई. में चार्ल्स पंचम ने श्मालकाल्डेन संघ का दमन करने के लिये एक सेना का संगठन किया और संघ पर आक्रमण करने की योजना तैयार की। उसी समय अचानक लूथर का स्वर्गवास हो गया। उसकी मृत्यु के उपरान्त लूथर के धार्मिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में लूथरवादियों में कुछ मतभेद उत्पन्न हो गया। प्रोटेस्टेंटों की इस फूट का लाभ उठाते हुए चार्ल्स पंचम ने संघ पर आक्रमण कर दिया जिसमें चार्ल्स की विजय हुई उसकी शक्ति बढ़ गई।

3.7.5 ट्रेंट की परिषद

पोप ने चार्ल्स पंचम की बढ़ती हुई शक्ति को सीमित करने के लिये ट्रेंट में चर्च की एक आम सभा बुलाई। इस सभा में कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट दोनों धर्मानुयाइयों को भाग लेना था। पोप इस सभा में स्वयं उपस्थित नहीं हो सका और उसने अपने एक आदेश के द्वारा इस सभा को स्थागित कर दिया। किन्तु चार्ल्स ने पोप के आदेश को नजरांदाज कर आम सभा का आयोजन किया और दोनों धर्मों के अनुयाइयों को धार्मिक समझौते के लिये अवसर प्रदान किया तथा उसने प्रोटेस्टेंटों को कुछ सुविधायें भी प्रदान कीं। सम्राट चार्ल्स पंचम ने यह कार्य एक आदेश के तहत किये थे। अतः उसके इस कार्य को अन्तरिम समझौता कहते हैं। किन्तु यह आन्तरिक समझौता सफल नहीं हो सका और इससे कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट दोनों ही वर्ग असन्तुष्ट रहे और सम्राट के विरोधी बन गये।

1.3.7.6 चार्ल्स का जर्मनी से निकाला जाना

चार्ल्स ने अपने समर्थक मॉरिस को सेक्सनी का शासक नियुक्त किया था। प्रोटेस्टेंटों और कैथोलिकों दोनों ही का विरोध होने से मोरिस ने भी चार्ल्स का समर्थन त्याग कर प्रोटेस्टेंटों का साथ देना आरम्भ किया। उसने फ्रांस के सहयोग से चार्ल्स पंचम पर आक्रमण करके उसे जर्मनी छोड़कर स्पेन भाग जाने के लिये विवश कर दिया। इस प्रकार जर्मनी में चार्ल्स का प्रभाव का अन्त हो गया।

1.3.7.7 आग्सबर्ग की सन्धि

1555 ई. में चार्ल्स के जर्मनी से भाग जाने के उपरान्त उसके भाई फर्डीनेण्ड ने एक अल्पकालीन सन्धि प्रोटेस्टेंटों के साथ सम्पन्न की। यह सन्धि ''पेसू का कन्वेन्शन'' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके उपरान्त 1555 ई. में एक स्थायी सन्धि प्रोटेस्टेंटों के साथ करके जर्मनी में फैली हुई दीर्घकालीन धार्मिक अशान्ति का अन्त करके शान्ति की स्थापना की गई।

सन्धि का परिणाम

यह सन्धि जर्मनी से धार्मिक संघर्षों का सदैव के लिये अन्त करने के अभिप्राय से की गई थी। इसके द्वारा यद्यपि आगामी 50 वर्षों तक धार्मिक संघर्ष शान्त रहे, परन्तु स्थायी शान्ति की स्थापना नहीं की जा सकी। कैथोलिकों की यह इच्छा थी कि धर्म परिवर्तन करने वाले व्यक्तियों की सम्पत्ति उन्हें न देकर चर्च को दे दी जाए। इसके विपरीत प्रोटेस्टेंटों ने इस बात पर बल दिया कि जो व्यक्ति धर्म परिवर्तन करे उसकी सम्पत्ति भी उसी के साथ रहे। इस मतभेद के कारण ही तीस वर्षीय युद्ध की अग्नि में देश को झुलसना पड़ा। शैविल ने इसके विषय में लिखा है-''सन्धि की इस धारा ने कैथोलिकों और प्रोटेस्टेंटों में मतभेद की उत्पत्ति की जिसके कारण आगे चलकर तीस वर्षीय युद्ध हुआ।''

1.3.8 इंग्लैंड में धर्म सुधार आन्दोलन

मार्टिन लूथर का धर्म सुधार आन्दोलन केवल जर्मनी तक ही सीमित नहीं रह सका। उसका प्रभाव शीघ्र ही अन्य यूरोपीय देशों पर पड़ने लगा। अतः अन्य देशों की भाँति इंग्लैण्ड भी इसके प्रभाव से अछुता नहीं रहा और वहाँ के तत्कालीन जीवन पर धर्म सुधार आन्दोलन का प्रभाव पड़ने लगा और कालान्तर में इसका प्रभाव इंग्लैंड के उपनिवेशों पर भी दिखाई देता है।

1.3.8.1हेनरी अष्टम के काल में धर्म सुधार

इस आन्दोलन का आरंभ सम्राट हेनरी अष्टम के शासनकाल में हुआ तथा इसका स्वरूप राजनीतिक होने के साथ-साथ व्यक्तिगत भी रहा। इंगलैण्ड में धर्म सुधार के विकास का अध्ययन निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है -

(1) मानववादियों का प्रभाव

हेनरी अष्टम से पूर्व इंग्लैण्ड में नवीन जागरण से प्रभावित जॉन कौलेट, सर थामस मूर और इरेस्मस आदि मानव वादियों ने भी कैथोलिक चर्च और पोप की अनेक त्रुटियों और दोषों को जनता के सम्मुख रखते हुए दोनों का विरोध किया था, परन्तु उन्हें अपने प्रयास में अधिक सफलता नहीं मिल सकी और इंग्लैण्ड पोप और कैथोलिक चर्च का उपासक बना रहा।

(2) हेनरी अष्टम पोप के अनुयायी के रूप में

आरम्भ में इंग्लैण्ड का सम्राट हेनरी अष्टम पोप का समर्थक था। उसने इंग्लैण्ड में लूथरवाद के प्रसार को रोकने के लिए लूथर का विरोध किया था। उसने पोप के अधिकारों को न्यायोचित सिद्ध करने के लिये 1521 ई. में एक पुस्तक प्रकाशित की। पोप ने हेनरी अष्टम के इस कार्य से प्रसन्न होकर उसे धर्म रक्षक और गोल्डेन रोज की उपाधियाँ प्रदान की थीं। हेनरी अष्टम ने अपने देश में लूथरवादियों को कठोर दण्ड देकर उसके प्रसार की सम्भावनाएँ नष्ट कर दी थीं।

(3) हेनरी अष्टम का पोप से विरोध

हेनरी अष्टम का विवाह अपने बड़े भाई आर्थर की विधवा कैथेराइन के साथ हुआ था। वह हेनरी अष्टम से आयु में लगभग 5 वर्ष बड़ी थी। वह प्रायः बीमार रहती थी। उसकी एक पुत्री के अतिरिक्त और कोई सन्तान जीवित न रही अतः इंग्लैंड की राजगद्दी के लिए पुत्र के रूप में कोई उत्तराधिकारी कैथेराइन से प्राप्त नहीं होने के कारण हेनरी अष्टम ने 1527 ई. में उसे तलाक देने की स्वीकृति पोप से लेनी चाही। परन्तु पोप विवाह विच्छेद की स्वीकृति देकर स्पेन के सम्राट चार्ल्स पंचम को रुष्ट नहीं करना चाहता था, क्योंकि कैथेराइन चार्ल्स पंचम की बुआ थी। पोप, हेनरी अष्टम को भी अपना विरोधी नहीं बनाना चाहता था। अतः उसने विवाह विच्छेद की इस समस्या को कई वर्षों तक टालने का प्रयास किया, परन्तु हेनरी अष्टम टॉमस बोलेन की अति सुन्दर पुत्री ऐने बोलेन के प्रेम में फँस चुका था और उसे अपनी पत्नी बनाने के लिये दृढ़ संकल्प था। अतः उसने पोप के साथ अपने सभी प्रकार के सम्बन्ध-विच्छेद कर लिये।

(4) हेनरी अष्टम के पोप विरोधी कार्य

हेनरी अष्टम ने सबसे पहले अपने पोप समर्थक मन्त्री कार्डिनल बूल्जे को प्रधान मन्त्री पद से पृथक् कर दिया और सर टॉमस क्रामवेल को अपना प्रधान मन्त्री नियुक्त किया। इसके उपरान्त उसने संसद का अधिवेशन बुलाकर उससे निम्नलिखित कार्यों को करने की स्वीकृति प्राप्त की। यह संसद अपने इन कार्यों के कारण सुधारक संसद के नाम से प्रसिद्ध है। इस संसद ने निम्न कार्यों को करने के अधिकार हेनरी अष्टम को प्रदान किये -

(1) हेनरी अष्टम को पोप तथा रोम के चर्च के साथ अपना और इंग्लैंड का सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार।

(2) चर्च में उत्पन्न दोषों को दूर करने के लिये नियम बनाने का अधिकार।

हेनरी अष्टम ने उपर्युक्त अधिकारों को प्राप्त करके निम्नांकित कार्य किए जिससे इंग्लैंड के सम्बन्ध पोप और रोम के चर्च के साथ सदैव के लिए पूर्ण रूप से विच्छेद हो गए -

(अ) ऐन्नाटेज अधिनियम

1532 ई. में हेनरी अष्टम ने इस अधिनियम को लागू किया। इसके अनुसार पोप को भेजे जाने वाले सभी प्रकार के धार्मिक करों का भेजना बन्द कर दिया गया। यहाँ तक कि पादरी लोग भी अपने प्रथम वर्ष की आय रोम नहीं भेज सकते थे। इस प्रकार के धर्मकरों की आय अब पोप के बदले हेनरी अष्टम को दी जाने लगी।

(ब) अपीलों का विधान

1553 ई. में अपीलों के विधान को लागू किया गया। जिसके अनुसार विवाह, तलाक, वसीयत तथा अंग्रेजी चर्च के निर्णय के विरूद्ध अपील पोप के पास न भेजी जाकर देश के ही चर्च के प्रमुख द्वारा सुनी जायेगी। इस अधिनियम को लागू करके हेनरी अष्टम ने तुरन्त कैथेराइन को तलाक देने की स्वीकृति प्राप्त की और उसे तलाक देकर अपनी प्रेमिका ऐने बोलेन से विवाह कर लिया।

(स) प्रमुख विधान

1535 ई. में हेनरी अष्टम ने प्रभुत्व विधान के अधिनियम को लागू कराया। इसके अनुसार इंग्लैंड के चर्च में पोप के सभी प्रकार के अधिकारों की समाप्ति कर दी गई और इंग्लैंड के राजा को अंग्रेजी चर्च का मुख्य अधिष्ठाता स्वीकार किया गया। इस प्रकार हेनरी अष्टम इंग्लैंड का पोप बन गया। राज्य भर के सभी उच्च

सदस्य कर्मचारियों को इस अधिनियम का पालन करने की शपथ लेनी पड़ी। जिसने इसका विरोध किया उसी को प्राण दण्ड दिया गया। इस तरह ऐंगलीकन चर्च इंग्लैंड के राजा के आधीन हो गया।

(द) मठों का नाश

इंग्लैंड के चर्च का अधिष्ठाता बनते ही हेनरी अष्टम ने ईसाई मठों की जाँच करानी आरम्भ की जिससे उसे पता चला कि मठों में शुद्ध और पवित्र जीवन व्यतीत करने के स्थान पर पापपूर्ण जीवन व्यतीत किया जा रहा था और मठ एक प्रकार से पोप समर्थकों के सुदृढ़ गढ़ बने हुए थे। अतः हेनरी ने मठों की सम्पत्ति जब्त कर ली और भूमि छीनकर नीलाम कर दी। इस प्रकार हेनरी को इंग्लैंड में पोप समर्थकों के संगठन को नष्ट करने में सफलता प्राप्त हुई।

(इ) हेनरी की धार्मिक नीति

हेनरी अष्टम ने यद्यपि पोप और रोम के कैथोलिक चर्च से इंग्लैंड के सम्बन्ध पूरी तरह तोड़ दिये थे, परन्तु उसने देश के भीतर कैथोलिक धर्म का विरोध नहीं किया और मार्टिन लूथर द्वारा स्थापित प्रोटेस्टेंट धर्म का अपने देश में प्रसार नहीं होने दिया। वह कैथोलिक और प्रोटेस्टेंटों दोनों को धार्मिक दण्ड देता था। कैथोलिकों को इसलिए कि वे पोप को अपना धार्मिक नेता स्वीकार किये हुये थे तथा प्रोटेस्टेंटों पर धार्मिक अत्याचार इसलिए करता था क्योंकि प्रोटेस्टेंट लोग कैथोलिक धर्म के विरोधी थे।

हेनरी अष्टम की धार्मिक नीति के निम्नलिखित तीन प्रमुख तत्व थे -

(क) अंगेजी भाषा में बाईबिल - हेनरी अष्टम ने लेटिन बाइबिल के प्रयोग को चर्चों में वर्जित कर दिया और उसके स्थान पर अंग्रेजी भाषा में बाइबिल प्रकाशित करा कर उसका चर्चों में प्रयोग कराया।

(ख) कुछ धार्मिक क्रियाओं पर रोक - हेनरी अष्टम ने रोम की धर्म यात्राओं, मृत प्राणियों के लिए क्षमापत्रों की खरीद तथा पापमोचन आदि धार्मिक क्रियाओं पर रोक लगा दी।

(ग) छः धाराओं का प्रकाशन - हेनरी अष्टम ने धर्म की रक्षा के लिए छः धाराओं का प्रकाशन कराया।

हेज ने इनके सम्बन्ध में लिखा है कि -''इन धाराओं में रोमन चर्च के अनिवार्य सिद्धान्त सम्मिलित थे।''

इस प्रकार हेनरी अष्टम की धार्मिक नीति का उद्देश्य इंग्लैंड में लूथर की विचारधारा के प्रसार को रोकना, कैथोलिक धर्म की रक्षा और रोम के पोप के साथ सभी प्रकार के सम्बन्धों का विच्छेद करना था। थेचर ने इंग्लैंड के चर्च की व्याख्या करते हुये लिखा है कि - 'हेनरी अष्टम के आधीन अंग्रेजी चर्च न तो पोप से सम्बन्धित था और न प्रोटेस्टेंट था। वह तो अंग्रेजी चर्च था जिसने अपने विकास के लिए एक स्वतन्त्र मार्ग की स्थापना की थी।''

अतः हेनरी अष्टम के शासन काल में सम्पन्न किया गया धर्म सुधार आन्दोलन एक राष्ट्रीय अथवा धार्मिक आन्दोलन न होकर एक राजनैतिक आन्दोलन था। विलियम स्टब ने इसका समर्थन करते हुये लिखा है कि - ''इंग्लैंड में यह आन्दोलन, सुधार की भावना के बजाय अधिकारों और राजनीतिक मान्यताओं पर आधारित था।''

1.3.8.2 एडवर्ड षष्ठम के काल में धर्म सुधार

हेनरी अष्टम की मृत्यु के उपरान्त उसका अल्पव्यस्क पुत्र एडवर्ड षष्ठम के नाम से गद्दी पर बैठा। उसका मामा सोमरसेट का डयूक, उसका संरक्षक बना। अतः राज्य सत्ता सोमरसेट के डयूक के हाथ में आ

गई। वह प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय का अनुयायी था। अतः इंग्लैड में प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रसार और कैथालिक धर्म की अवनति द्रुतगति से होने लगी।

सोमरसेट के डयूक ने प्रोटेस्टेंट धर्म के प्रसार के लिए निम्नलिखित कार्य किये -

(1) उसने एंग्लिकन चर्च को पूरी तरह प्रोटेस्टेंट बनाने के लिए सभी गिरजों में एक नवीन प्रार्थना पुस्तक प्रयोग कराई। (2) उसने प्रोटेस्टेंट सिद्धान्तों पर आधारित 42 धाराओं वाले नियम का गिर्जों में प्रयोग कराया (3) उसने कैथोलिकों की मासपूजा पर प्रतिबन्ध लगा कर उसे रोक दिया। (4) सभी गिर्जों से कैथोलिक मूर्तियों और चित्रों को हटा दिया गया। (5) प्रोटेस्टेंट धर्म के सिद्धान्तों के आधार पर तैयार की गई अनेक पुस्तकों का प्रकाशन कराकर उनका जनता में प्रचार कराया।

1.3.9 अन्य राष्ट्रों में धर्म सुधार आन्दोलन

1.3.9.1 स्केन्डिनेविया में धर्म सुधार

डेनमार्क, स्वीडन और नार्वे तीनों देश मिलकर उस समय स्केन्डिनेविया कहलाते हैं। उस समय इन तीनों देशों का शासन एक ही शासक के अधीन था। इन देशों में धर्म सुधार आन्दोलन का आरम्भ 1513 ई. में क्रिश्चियन द्वितीय के शासक बनने पर हुआ।

क्रिश्चियन द्वितीय ने शासक बनते ही सामन्तों की शक्ति का दमन करने का निश्चय किया। उसने 1520 ई. में स्वीडन से स्ट्रू स के कुलीन वर्ग के अधिकारों काअन्त कर दिया और इसके तीन वर्ष बाद स्वीडन के बहुत से देशभक्तों का वध करा दिया। क्रिश्चियन द्वितीय ने डेनमार्क में निम्न वर्ग तथा मध्यम वर्ग के व्यक्तियों को भड़का कर उनसे सामन्तों के विरुद्ध विद्रोह करवा दिया।

क्रिश्चियन द्वितीय ने सामन्तों की शक्ति के दमन के लिये जर्मनी से अनेक प्रोटेस्टेंटों को बुलाया जिन्होंने नार्वे, डेनमार्क और स्वीडन में प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रचार कर कैथलिकों को कमजोर कर दिया।

प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रसार

स्वीडन में शीघ्र ही एक धार्मिक क्रान्ति गस्टवस वासा के नेतृत्व में चारों ओर फैल गयी। क्रान्ति-कारियों ने चर्च की सम्पत्ति पर अधिकार जमा कर उसे देश की उन्नति के कार्यों में लगाना आरम्भ कर दिया। पोप ने स्वीडन निवासियों को नास्तिक घोषित कर दिया। अतः क्रान्तिकारियों ने प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रचार और प्रसार करना आरम्भ किया जिसके परिणामस्वरूप स्वीडन का राष्ट्रीय चर्च और राज्य धर्म दोनों ही प्रोटेस्टेंट मत के समर्थक बन गए। कैम्ब्रिज मॉडर्न हिस्ट्री में इस सम्बन्ध में लिखा है - ''गुस्तवस वासा के अनुयाइयों द्वारा चर्च की सम्पत्ति पर अधिकार कर लेने का परिणाम स्वीडन के कैथोलिक चर्च से सम्बन्ध विच्छेद तथा लूथरवाद के समर्थन के रूप में प्रकट हुआ।''

डेनमार्क में किसानों ने प्रोटेस्टेंट मत का विरोध तथा कैथोलिक धर्म का समर्थन किया, किन्तु राजा के समर्थन ने डेनमार्क में प्रोटेस्टेंट धर्म को प्रसारित होने में सफलता प्रदान की ओर डेनमार्क प्रोटेस्टेंट मत का अनुयायी बन गया।

1.3.9.2 स्विट्जरलैंड में धर्म सुधार

स्विट्जरलैंड में धर्म सुधार आन्दोलन का नेतृत्व अलरिच ज्विंग्ली ने किया था। उसी के कारण स्विट्जरलैण्ड में धर्म सुधार का अदुभुत रीति से प्रसार हुआ। थेचर ने ज्विंग्ली के प्रचार के सम्बन्ध में लिखा है कि ''1518 ई. में ग्लेरस के पादरी अलरिच ज्विंग्ली ने क्षमा पत्रों की बिक्री के सिद्धान्त का घोर विरोध किया।

उस काल में देश के बौद्धिक केन्द्र ज्यूरिक को अपने प्रचार का केन्द्र बना कर उसने शीघ्र ही सुधारवादियों के एक प्रभावशाली दल का समर्थन प्राप्त कर लिया। जिस प्रकार लूथर को जर्मनी में सफलता मिली थी उसी प्रकार ज्विंग्ली को स्विटजरलैंड में सफलता प्राप्त हुई। ‘‘

1.3.10 यूरोप में वाणिज्यवाद का विकास

1.3.10.1 वाणिज्यवाद से अभिप्राय

व्यापारिक क्रान्ति ने एक नवीन आर्थिक विचारधारा को जन्म दिया। इसका प्रारम्भ 16वीं सदी में हुआ। इस नवीन आर्थिक विचारधारा को वाणिज्यवाद, वणिकवाद या व्यापारवाद कहा गया है। फ्रांस में इस विचारधारा को कोल्बर्टवाद और जर्मनी में केमरलिज्म कहते हैं। 1776 ई. में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एडमस्मिथ ने अपने ग्रन्थ ‘वेल्थ ऑफ नेशन्स’ में इसका विवेचन किया है। वाणिज्यवाद से अभिप्राय उस आर्थिक विचारधारा से है जो पश्चिमी यूरोप के देशों में विशेषकर फ्रांस, इंग्लैण्ड और जर्मनी में 16वीं और 17वीं सदी में प्रसारित हुई थी और 18वीं सदी के मध्य तक इसका खूब विकास हुआ। वाणिज्यवाद की धारणा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और उससे प्राप्त धन से संबंधित है। इस वाणिज्यवाद के सिद्धान्त के अनुसार कृषि और उसके उत्पादन की कुछ सीमा तक ही वृद्धि कर सकते हैं। कृषि आर्थिक दृष्टि से कुछ सीमा के बाद अनुत्पादक भी हो सकती है, पर उद्योगों, व्यवसायों और वाणिज्य-व्यापार की वृद्धि और विस्तार की कोई सीमा नहीं है। औद्योगीकरण से और व्यापार की नियमित वृद्धि से देश सोना-चाँदी प्राप्त कर समृद्ध और शक्तिशाली होगा। यह वाणिज्यवाद का मूल सिद्धान्त है।

1.3.10.2 वाणिज्यवाद के प्रमुख लक्षण

(1) सोने और चाँदी का संचय

व्यापार-वाणिज्य से धन की वृद्धि होगी और यह धन सोने, चाँदी, हीरे, जवाहरात, बहुमूल्य रत्न के रूप में प्राप्त कर उनका संग्रह करना चाहिए। ये सब न तो नाशवान हैं और न परिवर्तनशील। वे हर समय और हर अवसर पर प्रचुर सम्पत्ति ही रहते हैं। इनके भण्डार राजशक्ति के प्रतीक होते हैं।

(2) अंतर्राज्यीय व्यापार

वाणिज्यवाद का आधार है देश में औद्योगिकरण कर देश के बढ़ते हुए उत्पादन की वस्तुओं का अन्य देशों को निर्यात करना। आवश्यक हुआ तो राज्य को कुछ विशिष्ट उद्योगों को संरक्षण देना चाहिए और विदेशी व्यापार को प्रोत्साहित करना चाहिए।

(3) अनुकूल और संतुलित व्यापार

व्यापार में पर्याप्त धन प्राप्त करने के लिए विदेशों को अत्यधिक मात्रा में व्यापारिक माल बेचें, पर विदेशों से अपने देश में न्यूनतम मात्रा में माल मँगाएँ। इसका अर्थ यह है कि देश न्यूनतम आयात करे और अधिकतम निर्यात करे। इससे देश को निर्यात करने में बहुमूल्य धातुएँ जैसे स्वर्ण और रजत प्राप्त होंगी और न्यूनतम आयात करने से विदेशों को बहुत कम धन बाहर भेजना पड़ेगा। इस सिद्धान्त को अनुकूल और संतुलित व्यापार कहते हैं। इस प्रणाली को अपनाने से देश में अधिक उत्पादन होगा, अधिक मुद्रा प्रचलन में होगी, पूँजीवाद को प्रोत्साहन मिलेगा और देश आर्थिक दृष्टि से बलशाली होगा।

(4) औद्योगिक प्रतिबंध और व्यापारिक नियंत्रण

देश में उद्योग-व्यवसायों को राजकीय प्रोत्साहन देकर उनमें अधिकाधिक वृद्धि करना। ऐसा करने में कहीं अत्यधिक उत्पादन नहीं हो जाये। अत्यधिक उत्पादन से अनेक हानियाँ होती हैं, जैसे - बेरोजगारी में वृद्धि, माल के उठाव का अभाव, भावों का गिरना, अर्थ-व्यवस्था का गड़बड़ाना। इसलिए उत्पादन को राज्य कानूनों से नियंत्रित करना पड़ता है।

(5) नवीन व्यापारिक मण्डियाँ और उपनिवेश

देश के बाहर भेजी जाने वाली तैयार वस्तुओं की खपत के लिए विदेशों में व्यापारिक मंडियों को प्राप्त करना और वहाँ से देश के उद्योग-व्यवसायों के लिए कच्चा माल प्राप्त करना। ऐसी व्यापारिक मंडियाँ प्राप्त करने के लिए शक्तिशाली राज्यों ने विदेशों में अपने उपनिवेश बसाये जहाँ कि राज्य में बनी हुई वस्तुओं को सरलता से लाभप्रद दरों से बेचा जा सके। इससे देश को अधिक आर्थिक लाभ होगा। इस प्रकार वाणिज्यवाद ने उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का मार्ग प्रशस्त किया।

1.3.11 वाणिज्यवाद के विकास के कारण

13.11.1 समुद्री यात्राएँ और भौगोलिक खोजें

कोलम्बस, वास्कोडिगामा, अमेरिगो, मेगलन, जॉन केबाट जैसे साहसी नाविकों ने जोखिमभरी समुद्री यात्राएँ करके अनेक नवीन देशों की खोज की। वहाँ धीरे-धीरे नई बस्तियाँ बसाई गयीं। यूरोप के पश्चिमी देशों ने विशेषकर स्पेन, पुर्तगाल, हॉलैण्ड, फ्रांस और इंग्लैण्ड ने नये खोजे हुए देशों में अपने-अपने उपनिवेश और व्यापारिक नगर स्थापित किये। इन उपनिवेशों से चमड़ा, लोहा, रुई, ऊन आदि प्रकार का कच्चा माल प्राप्त कर अपने देश में इनसे नवीन वस्तुएँ निर्मित कर उपनिवेशों को निर्यात के रूप में भेजी और बदले में वहाँ से प्रचुर मात्रा में स्वर्ण और चाँदी प्राप्त की जाने लगी। इससे पूँजी का संचय हुआ, आयात-निर्यात बढ़ा और देश समृद्ध हुआ।

3.11.2 पुनर्जागरण का प्रभाव

पुनर्जागरण ने यूरोप में नवीन वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ-साथ मानव जीवन के प्रति अधिक अभिरुचि और आकांक्षाएँ उत्पन्न कीं। मानव जीवन को अधिक रुचिकर और सुख-सुविधा सम्पन्न बनाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिया गया। इससे भौतिकवाद में वृद्धि हुई। भौतिक सुख-सुविधाओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त धन की माँग बढ़ी और यह बढ़ता हुआ धन वाणिज्य-व्यापार और उद्योग-धंधों से ही प्राप्त हो सकता था। इससे वाणिज्यवाद को प्रोत्साहन मिला।

3.11.3 मुद्रा प्रचलन और बैंकिंग प्रणाली

विभिन्न व्यवसायों और उद्योग-धंधों के बढ़ जाने से व्यापार प्रणालियों में सुधार और परिवर्तन हुए। सुनिश्चित वैज्ञानिक अन्वेषणों के आधार पर उद्योग-धंधों में अधिकाधिक उत्पादन और व्यापार में वस्तुओं का अधिकाधिक क्रय-विक्रय होने लगा। इससे मुद्रा प्रचलन बढ़ा और आधुनिक बैंकिंग प्रणाली का प्रारम्भ और विकास हुआ। बैंकों ने जमा धन को अन्य व्यापारियों, व्यवसायियों और उद्योगपतियों को उनकी साख पर उधार दिया और उनके व्यापारिक वस्तुओं के क्रय-विक्रय संबंधी भुगतान प्रक्रिया को सरल किया। धीरे-धीरे अधिकाधिक पूँजी को व्यापारियों को उपलब्ध कराने हेतु जाइन्ट स्टॉक कम्पनियाँ स्थापित की गयीं और

उनका विकास किया गया। इससे वाणिज्यवाद को अधिकाधिक प्रोत्साहन मिला। देशी और विदेशी व्यापार से वाणिज्यवाद का एक नवीन युग प्रारम्भ हुआ।

1.3.11.4 नवोदित राष्ट्रीय राज्यों द्वारा संरक्षण

यूरोप में 15वीं और 16वीं सदी में राष्ट्रीय राज्यों का उदय और विकास हुआ। इन बलशाली राष्ट्रीय राजाओं ने देश में आंतरिक शांति स्थापित की और बाहरी आक्रमणों से देश को सुरक्षा प्रदान की। सुरक्षा और शांति के वातावरण में उद्योग-धंधे बढ़े और देशी-विदेशी व्यापार बढ़ा और राष्ट्रीय राजाओं ने सोने-चाँदी के आयात को प्रोत्साहित किया। इसी बीच व्यापारियों से कर के रूप में पर्याप्त धन प्राप्त हो जाने से राष्ट्रीय राजाओं ने युद्ध किये और अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार किया तथा अन्य महाद्वीपों में अपने नये उपनिवेश स्थापित किये। इन परिस्थितियों में वाणिज्यवाद खूब फला-फूला।

1.3.12 वाणिज्यवाद के दोष

1.3.12.1 पूँजीवाद

वाणिज्यवाद ने उद्योग-धन्धों के प्रसार से पूँजीवाद को जन्म दिया। इस पूँजीवाद से यूरोपीय समाज में दो वर्गों का उदय हुआ - प्रथम पूँजीपतियों और उद्योगपतियों का वर्ग जिसने उत्पादन के साधनों पर अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया और द्वितीय सर्वहारा वर्ग जिसके पास स्वयं के स्वामित्व के उत्पादन के साधन नहीं होने से उन्हें अपने श्रम को सस्ते दामों पर बेचना पड़ता था। इससे कालान्तर में पूँजीपति और सर्वहारा वर्ग में कड़ा संघर्ष छिड़ गया, जिससे विद्रोह और क्रान्तियाँ हुई तथा आर्थिक व्यवस्था डगमगा गयी।

1.3.12.2 संकीर्ण राष्ट्रीयता

वाणिज्यवाद ने एक राष्ट्र को महत्व देकर उसकी समृद्धि के लिए दूसरे अन्य राष्ट्रों के शोषण का मार्ग प्रशस्त किया। एक राष्ट्र अधिक सशक्त और सम्पन्न हो गया और अन्य छोटे-छोटे देश शोषित होने से दरिद्र और गरीब हो गये। इस प्रकार संकीर्ण राष्ट्रीयता का मार्ग प्रशस्त हुआ।

1.3.12.3 व्यापारिक और औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा

वाणिज्यवाद ने विभिन्न देशों में मैत्रीपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक और औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया। इससे विध्वंसकारी युद्ध हुए।

1.3.12.4 सोने-चाँदी के संचय की निरर्थकता

वाणिज्यवाद के कारण कई पूँजीपतियों ने सोना-चाँदी प्राप्त कर उनके संचय को अधिक महत्व दिया। फलतः जिस वर्ग के पास स्वर्ण और चाँदी संचित होते गये वह विलासी और भ्रष्ट हो गया। समाज में नैतिक मूल्य समाप्त हो गये। उद्योग-धंधों के विकास स्पष्ट हुआ कि देश में सोने-चाँदी के भण्डार की अपेक्षा लोहा, कोयला, खनिज, तेल आदि अधिक मूल्यवान हैं। इनके समुचित दोहन से राष्ट्र अधिक समृद्ध और शक्तिशाली होगा। इस सिद्धान्त ने सोने-चाँदी के भण्डार को निरर्थक कर दिया।

1.3.12.5 कृषि की उपेक्षा

वाणिज्यवाद के समर्थकों ने उद्योग-धंधों और व्यवसायों के अधिकतम विकास पर बल दिया। इससे कृषि का क्षेत्र अविकसित और पिछड़ा हुआ रह गया। किसी भी देश की आर्थिक समृद्धि के लिए कृषि और उद्योग-धंधों का सन्तुलित विकास होना चाहिए। अतः वाणिज्यवाद से कृषि का ह्रास हुआ।

1.3.12.6 लोककल्याण का अभाव

वाणिज्यवाद ने राजनीतिक क्षेत्र में राज्य और शासक को और आर्थिक क्षेत्र में उद्योग-धंधों और व्यापार को आर्थिक महत्व दिया। जबकि सर्वहारा वर्ग या दरिद्र जनता या आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के हित में कोई रुचि नहीं ली। इस वर्ग के लिए कोई योजना या सिद्धान्त नहीं थे। अतः वाणिज्यवाद में गरीबों, शिल्पियों और श्रमिकों का शोषण हुआ।

1.3.12.7 राजसत्ता और शक्ति में वृद्धि

वाणिज्यवाद के समर्थकों, व्यापारियों और उद्योगपतियों ने शक्तिशाली राज्य का समर्थन किया। उसे धन से सहयोग दिया, क्योंकि उनके हित संवर्धन के लिए सशक्त राजा ही आन्तरिक शान्ति और बाह्य सुरक्षा प्रदान कर सकता था। कालान्तर में देश में धन की प्रचुरता और समृद्धि से बलशाली राजा निरंकुश स्वेच्छाचारी शासक हो गये। अतः निरंकुश शासकों ने अपनी शक्तियों और अधिकारों का दुरूपयोग किया। कालान्तर में उनकी निरंकुशता के विरुद्ध विद्रोह प्रारंभ हुए।

1.3.13 वाणिज्यवाद के परिणाम और महत्व

लगभग 250 वर्षों तक वाणिज्यवाद की विचारधारा का प्रभाव यूरोप में रहा। वाणिज्यवाद की विचारधारा ने यूरोप के राष्टों की आर्थिक नीति को निर्धारित किया। यूरोप में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रारम्भ वाणिज्यवाद से होता है। आर्थिक लाभ के लिए विभिन्न राष्ट्रों ने सन्तुलित आयात-निर्यात की नीति अपनायी। वाणिज्यवाद के कारण नवीन उद्योगों के माल को अधिकाधिक निर्यात कर विदेशों से बड़े पैमाने पर सोना-चाँदी और धन प्राप्त किया गया। इस सिद्धान्त को अपनाया गया कि वस्तुओं का अधिकाधिक निर्यात करना और आयात कम करना, जिससे देश अधिक समृद्ध हो जाये। विदेशी माल की खरीद और आयात को निरूत्साहित किया गया। स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहित करके उत्पादन में अधिकाधिक वृद्धि की गई। कच्चा माल प्राप्त करने और बने हुए माल की बिक्री और खपत के लिए नवीन उपनिवेशों की स्थापना की गई। इससे औपनिवेशिक साम्राज्य बने। वाणिज्यवाद की नीतियाँ और सिद्धान्त अपनाने से यूरोप में इंग्लैण्ड, फ्रांस, स्पेन और जर्मनी जैसे महान् शक्तिशाली राज्यों का निर्माण हो सका। शीघ्र ही इनका साम्राज्य यूरोप के बाहर अन्य महाद्वीपों में भी फैल गया जिसके परिणाम स्वरूप विश्व में शक्ति संतुलन की समस्या उत्पन्न हो गई।

1.3.14 सारांश

धर्म सुधार आन्दोलन का अभिप्राय व उसके कारण-यूरोप की ईसाई जनता के बीच चलाया गया वह आन्दोलन जिसका उद्देश्य कैथोलिक धर्म के दोषों को दूर करके चर्च के जीवन को पवित्र बनाना और पोप के अनुचित रूप से बड़े प्रभाव को सीमित रखा था।

(1) धार्मिक कारण - (क) पोप के जीवन में भ्रष्टता और धन के प्रति अत्यधिक मोह, (ख) धर्म में उत्पन्न दोष, (ग) पोप का असीमित प्रभाव, (घ) पोपशाही का विभाजन। (2) आर्थिक कारण - (क) चर्च के पास एकत्रित अतुलित धन-राशि का दुरुपयोग, (ख) धार्मिक करों की अधिकता, (ग) पादरियों एवं धर्माधिकारियों की धन के आधार पर नियुक्ति, (घ) जनता में धन संचय की प्रवृत्ति। (3) सांस्कृतिक कारण - (क) नवीन आविष्कारों का प्रभाव, (ख) जनता में नवीन ज्ञान का प्रसार। (4) विद्वानों की कृतियाँ - (क) इरास्मस की पुस्तक ''मूर्खता की प्रशंसा'', (ख) अन्य विद्वानों की कृतियाँ। (5) राजनीतिक कारण (क) राष्ट्रीयता की भावना, (ख) यूरोपीय

शासकों द्वारा पोप के विरोधियों को सहयोग, (ग) धार्मिक करों में वृद्धि। (4) तात्कालिक कारण-क्षमा-पत्रों की बिक्री।

धर्म सुधार आन्दोलन का प्रारंभ - पोप का विरोध और आन्दोलन का आरम्भ। जॉन विक्लिफ और जॉनहस द्वारा पोप के अधिकारों का विरोध और कैथोलिक धर्म उत्पन्न बुराइयों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करना।

धार्मिक आन्दोलन का आरम्भ जर्मनी में होने के कारण - (1) राजनीतिक दशा, (2) रोमन सम्राट की हस्तक्षेप करने में असमर्थता (3) मार्टिन लूथर का प्रचार। मार्टिन लूथर का जन्म, शिक्षा और पोप का विरोध - 1483 ई. में आइसलेबेन में जन्म, एरफर्ट विश्वविद्यालय से कानून और धर्म में डिग्री प्राप्त करना, 1510 ई. में रोम की यात्रा और पोप के दरबार में व्याप्त भ्रष्टाचार को स्वयं देखना 1517 ई. में बर्टेम्बर्ग में क्षमापत्रों की बिक्री का विरोध 95 अकाट्य तर्कों को लिखकर गिरजे के द्वार पर टाँगना। लूथरवाद के सिद्धान्त - (1) बाह्याडम्बर का त्याग, (2) परमेश्वर में आस्था, (3) पुरोहितों का विरोध, (4) राष्ट्रीय चर्च का समर्थन, (5) संस्कारों की बहुसंख्या का विरोध(6) ईश्वर की कृपा में दृढ़ विश्वास और (7) सेवा एवं शान्ति में विश्वास। धर्म सुधार की प्रमुख घटनायें - (1) कृषक आन्दोलन, (2) प्रोटेस्टेंट मत की स्थापना (1529 ई.) (3) श्मालकाल्डेन संघ का निर्माण, (4) लूथर का स्वर्गवास, (5) ट्रेंट की परिषद् (6) चार्ल्स का जर्मनी से निष्कासन। आग्सवर्ग की सन्धि की धारायें - (1) धर्म अपनाने की राज्यों को स्वतन्त्रता, (2) कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट धर्म को मान्यता, (3) चर्च की सम्पत्ति की सुरक्षा।

इंग्लैंड में धर्म सुधार का विकास - हेनरी अष्ठम के काल में धर्म सुधार (1) मानववादियों का प्रभाव-सर थामस मूर, जॉन कोलेट और इरेस्मस द्वारा पोप और चर्च की त्रुटियों का प्रदर्शन। हेनरी अष्टम द्वारा-पोप तथा रोमन चर्च के साथ सम्बन्ध विच्छेद, (2) ऐन्नाटेज अधिनियम पास करके पोप को भेजे जाने वाले धार्मिक करों का भेजना बन्द करना, (3) अपीलों का विधान लागू करना और कैथेराइन को तलाक तथा ऐने बोलेन से विवाह, (4) प्रभुत्व विधान पास करा कर राजा को चर्च को अधिष्ठाता स्वीकार करना, (5) मठों का नाश। हेनरी की धार्मिक नीति-अंग्रेजी में बाईबिल का प्रकाशन (2) धर्मयात्रा, क्षमापत्रों की खरीद, पापमोचन आदि धार्मिक क्रियाओं पर प्रतिबंध (3) छः धाराओं का प्रकाशन। एडवर्ड षष्ठम के काल में धर्म सुधार - (1) नवीन प्रार्थना पुस्तकों का गिरजों में प्रयोग। (2) 42 धाराओं के नियम का प्रयोग। (3) मास पूजा पर प्रतिबंध। (4) गिर्जों से कैथोलिक चित्रों और मूर्तियों का हटाया जाना, (5) प्रोटेस्टैण्ट धर्म के प्रचार के लिये पुस्तकों का प्रकाशन।

यूरोप में वाणिज्यवाद का विकास - वाणिज्यवाद से अभिप्राय। वाणिज्यवाद के प्रमुख लक्षण - (1) सोने और चाँदी का संचय (2) अंतर्राज्यीय व्यापार (3) अनुकूल और संतुलित व्यापार (4) औद्योगिक प्रतिबंध और व्यापारिक नियंत्रण(5) नवीन व्यापारिक मण्डियाँ और उपनिवेश। वाणिज्यवाद के विकास के कारण - (1) समुद्री यात्राएँ और भौगोलिक खोजें (2) पुनर्जारण का प्रभाव (3) मुद्रा प्रचलन और बैंकिंग प्रणाली (4) नवोदित राष्ट्रीय राज्यों द्वारा प्रोत्साहन और संरक्षण। वाणिज्यवाद के दोष - (1) पूँजीवाद (2) संकीर्ण राष्ट्रीयता (3) अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक और औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा (4) सोने-चाँदी के संचय की निरर्थकता (5) कृषि की उपेक्षा (6) लोककल्याण का अभाव (7) राजसत्ता और शक्ति में वृद्धि

1.3.15 बोध प्रश्न

1.3.15.1 लघु उत्तरीय प्रश्न

1. धर्म सुधार आंदोलन से आप क्या समझते हैं ?
2. चर्च और पोप से आप क्या समझते हैं ?
3. स्विट्जरलैण्ड में धर्म सुधार आंदोलन लघु नोट लिखिये।
4. धर्म सुधार आंदोलन पर किन्हीं तीन विद्वानों के विचार लिखिये।
5. आग्सबर्ग संधि का संक्षिप्त उल्लेख कीजिये।
6. ट्रैंट परिषद के निर्णयों पर प्रकाश डालिये।
7. वाणिज्यवाद के महत्व एवं परिणाम पर प्रकाश डालिये।
8. वाणिज्यवाद से क्या अभिप्राय है ?
9. वाणिज्यवाद के दोषों का विवेचन कीजिए।
10. पोप मोचन पत्रों से आप क्या समझते हैं ?

1.3.15.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. धर्म सुधार आंदोलन के कारणों का उल्लेख कीजिये।
2. जर्मनी में हुए धर्म सुधार आंदोलन की विवेचना कीजिये।
3. मार्टिन लूथर पर एक निबन्ध लिखिये।
4. मार्टिन लूथर के सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिये।
5. धर्म सुधार आंदोलन की प्रमुख घटनाओं का वर्णन कीजिये।
6. इंग्लैंड में हुए धर्म सुधार आंदोलन की विवेचना कीजिये।
7. वाणिज्यवाद से क्या अभिप्राय है ? वाणिज्यवाद के प्रमुख लक्षणों का विवेचन कीजिए।
8. वाणिज्यवाद के विकास के कारणों की समीक्षा कीजिए।
9. मार्टिन लूथर और पोप के मध्य सम्बन्धों पर प्रकाश डालिये।
10. यूरोपीय समाज में पोप की भूमिका और चर्च की आय का वर्णन कीजिये।

1.3.16 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कैटलबी, सी. डी. एम.: हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न टाइम्स
2. हेजन, सी. डी.: मॉडर्न यूरोपीयन हिस्ट्री
3. चैहान, देवेन्द्र सिंह: यूरोप का इतिहास (1815-1919)
4. फाइप, सी. एच.: ए हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप
5. गूच, जी. पी.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
6. फिशर, एच. ए. एल.: ए हिस्ट्री ऑफ यूरोप
7. हेज, जे. एच.: पोलिटिकल एंड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप, भाग 1 एवं 2
8. ग्रान्ट एवं टेम्परले: यूरोप इन दि 19 एंड 20 सेन्चुरीज
9. मेरियट, जे. ए. आर.: इंग्लैंड सिंस वाटइलू
10. मेरियट, जे. ए. आर.: दि ईस्टर्न क्वेश्चन
11. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-1950)

12. जैन एवं माथुर: विश्व का इतिहास (1500-2000)
13. पान्डेय, धनपति: आधुनिक एशिया का इतिहास
14. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक यूरोप का इतिहास
15. वर्मा, दीनानाथ: अंतर्राष्ट्रीय संबंध
16. वर्मा, दीनानाथ: आधुनिक एशिया का इतिहास
17. वर्मा, रमेशचन्द्र: इंग्लैंड का इतिहास
18. सिन्हा विपिन बिहारी: आधुनिक ग्रेट ब्रिटेन
1. 19 मेहता बी. एन.: यूरोप का इतिहास
19. शर्मा एल. पी.: इंग्लैंड का इतिहास
20. चैहान, देवेन्द्र सिंह: समकालीन यूरोप (1919-1950)
21. महाजन वी. डी.: यूरोप का इतिहास (1789-1945)
22. वर्मा लाल बहादुर: यूरोप का इतिहास (भाग 1 एवं 2)
23. दुबे शुकदेव प्रसाद : आधुनिक विश्व का कूटनीतिक इतिहास (भाग 1 एवं 2)
24. नेहरू जवाहरलाल: विश्व इतिहास की झलक

खंड-3 राष्ट्रीय राज्यों का उदय
इकाई - 4 वियना कांग्रेस, मेटरनिख व्यवस्था

इकाई की रूपरेखा

3.1.0. उद्देश्य
3.1.1. प्रस्तावना
3.1.2. वियना महासम्मेलन
3.1.3. वियना कांग्रेस द्वारा संपन्नकार्य
3.1.4. वियना समझौतों का विभिन्न शक्तियों पर प्रभाव
3.1.5. वियना समझौतों की आलोचना
3.1.6. मेटरनिख व्यवस्था
3.1.7. सारांश
3.1.8. बोध प्रश्न
3.1.9. संदर्भ ग्रंथसूची

3.1.0. उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ का उद्देश्य विद्यार्थियों को वियना कांग्रेस (1814-15) द्वारा संपन्न कार्यों से परिचित कराना है। नेपोलियन के पतन के पश्चात् वियना में यूरोपीय देशों का एक सम्मेलन हुआ, जिसका उद्देश्य यूरोप की राज्य-व्यवस्था का पुनर्निर्माण था। नेपोलियन के युद्धों और उसकी विजयों के परिणामस्वरूप यूरोपीय देशों की राजनैतिक सीमाएँ अस्त-व्यस्त हो गई थीं। वियना में यूरोपीय देशों का यह महासम्मेलन इसीलिए बुलाया गया था, ताकि यूरोप का प्रादेशिक पुनर्गठन कर वहाँ शांति एवं व्यवस्था की स्थापना की जा सके। पाठ के अंत में मेटरनिख व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है।

3.1.1. प्रस्तावना

वियना कांग्रेस यूरोपीय देशों का एक महासम्मेलन था जिसका उद्देश्य नेपोलियन की पराजय के पश्चात् यूरोप का प्रादेशिक पुनर्गठन करना था। इस सम्मेलन में भाग ले रहे सभी देशों द्वारों इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी कि यूरोप की प्रादेशिक पुनर्व्यवस्था में वैधता के सिद्धांत का अनुसरण किया जाए। इस सिद्धांत के अनुसार, यूरोप के उन सभी राजाओं को उनके राजसिंहासन एवं राज्य वापस किए जाने थे जिन्हें नेपोलियन ने पदच्युत किया था। उदाहरणार्थ, इस सम्मेलन ने नेपोलियन के शासनकाल में सार्डीनिया में एक शरणार्थी की भाँति रह रहे पिडमौंट के राजा को पुनः पदारूढ़ करने का निर्णय लिया। इसके साथ उसे जेनोआ का प्रदेश भी दिया गया ताकि फ्रांस के दक्षिण-पूर्व में एक सशक्त राज्य का निर्माण हो, जो भविष्य में फ्रांस के आक्रमणों का बेहतर ढंग से प्रतिरोध कर सके। इसी प्रकार, बेल्जियम, जो ऑस्ट्रिया के अधीन था, को हॉलैण्ड के साथ संयुक्त करने का निर्णय लिया गया ताकि उत्तर में भी फ्रांस के विरुद्ध एक सशक्त अवरोध खड़ा किया जा सके। वस्तुतः इस सम्मेलन द्वारा यूरोप के कई देशों की सीमाएँ पुनर्निर्धारित की गईं तथा उनके बीच प्रदेशों का पुनर्वितरण किया गया। मेटरनिख के प्रयास से यह व्यवस्था एक लंबे समय तक कायम रही।

31.2. वियना महासम्मेलन

नेपोलियन के पतन के पश्चात् यूरोप एक जटिल समस्या से घिर गया था। पिछले पच्चीस वर्षों के सतत युद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपीय देशों की सीमाएँ बार-बार परिवर्तित होती रही थीं और कई देशों में पुराने राजवंशों को हटाया जा चुका था। नेपोलियन ने यूरोप के राजनैतिक नक्शे को बुरी तरह विकृत कर दिया था। इसलिए 1814 में उसके पदत्याग के बाद यूरोप का प्रादेशिक पुनर्गठन आवश्यक हो गया था।

इस दिशा में वियना सम्मेलन में संपन्न वियना समझौता (जून, 1815) के पहले ही विजयी देशों के बीच चाउमौंट की संधि (मार्च, 1814) एवं पेरिस की दो संधियाँ(मई, 1814 एवं नवबंर, 1814) हो चुकी थीं। इन संधियों द्वारा विजयी देशों ने फ्रांस की राजनैतिक सीमाओं को पुनर्निर्धारित करने के साथ-साथ फ्रांस के पुराने राजवंश, बूर्बों को पुनर्स्थापित करने का निर्णय लिया था। इन संधियों में विजयी देशों ने स्पष्ट किया कि उनका मुख्य उद्देश्य यूरोपीय महादेश में युद्ध के पूर्व की राजनैतिक सीमाओं को बहाल करना था। लुई XVIII को इसी निर्णय के अंतर्गत नीदरलैंड, इटली एवं जर्मनी में नेपोलियन द्वारा विजित प्रदेशों का परित्याग करना पड़ा। वियना का सम्मेलन मुख्य रूप से फ्रांस द्वारा परित्यक्त इन्हीं प्रदेशों को पुनर्वितरित करने के उद्देश्य से आयोजित किया गया था।

वियना सम्मेलन का आधुनिक यूरोप के इतिहास में विशेष महत्व है। ऑस्ट्रिया की राजधानी, वियना में आयोजित यह सम्मेलन सितंबर 1814 से जून 1815 के बीच संपन्न हुआ। तीस वर्षीय युद्ध की समाप्ति के बाद 1648 में आयोजित वेस्टफेलिया कांग्रेस के बाद यूरोप की समस्याओं पर विचार करने के लिए यूरोपीय देशों का इतना बड़ा सम्मेलन पहली बार वियना में ही आयोजित किया गया था। इसमें ऑस्ट्रिया एवं रूस के सम्राटों सहित प्रशा, बेवेरिया, वूर्टेम्बर्ग एवं डेनमार्क के राजा स्वयं सम्मिलित हुए। इनके अतिरिक्त यूरोप के लगभग सभी राजनयिक इस कांग्रेस में सम्मिलित हुए। वस्तुतः तुर्की को छोड़कर यूरोप के सभी देशों ने इस कांग्रेस में भाग लिया।

वियना में एकत्रित विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका मेटरनिख की रही। ऑस्ट्रिया का चांसलर, मेटरनिख अपनी कूटनीतिक योग्यता के लिए ख्यात था। उसने अपने प्रभाव का प्रयोग कर विभिन्न देशों को एक ऐसे समझौते के लिए राजी किया जिसने ऑस्ट्रिया को यूरोप में एक अत्यंत प्रधान देश के रूप में स्थापित कर दिया। रूस का जार अलेक्जैण्डर प्रथम भी अत्यंत प्रभावशाली था। वह एक उदार नेता के रूप में ख्यात था, किंतु वियना में उस पर मेटरनिख का प्रभाव हावी हो गया और वह उसकी प्रतिक्रियावादी नीति का समर्थक बन गया। ब्रिटिश प्रतिनिधि लॉर्ड कैसलरे एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था जिसकी दिलचस्पी यूरोप में शक्ति-संतुलन स्थापित करने में थी। उसने मित्रराष्ट्रों के परस्पर विरोधी हितों में सामंजस्य स्थापित करने का हर संभव प्रयास किया। प्रशा के राजा फ्रेडरिक विलियम III की अनुपस्थिति में प्रशा का प्रतिनिधित्व हार्डेनबर्ग ने किया। इन चार महाशक्तियों के अतिरिक्त कांग्रेस की कार्यवाही में टेलीरैण्ड की भी प्रमुख भूमिका रही। वह फ्रांस के राजा लुई XVIII का प्रतिनिधि था। उसकी नीति फ्रांस को पुनः एक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने की थी। वस्तुतः वियना कांग्रेस के सभी महत्वपूर्ण निर्णय इन्हीं पाँच बड़े देशों के द्वारा लिए गए।

31.3. वियना कांग्रेस के कार्य

वियना कांग्रेस का मुख्य कार्य उन प्रदेशों का वितरण करना था, जिन्हें नेपोलियन के पतन के बाद फ्रांस को त्याग देना पड़ा था। कांग्रेस में संपन्नसमझौते तीन सिद्धांतों पर आधारित थे-

1. शक्ति-संतुलन का सिद्धांत, जिसने यूरोप की शांति और व्यवस्था के लिए सुरक्षा का पर्याप्त प्रबंध किया। कांग्रेस में स्पष्ट रूप से घोषणा की गई कि इसका उद्देश्य नेपोलियन द्वारा गैर-फ्रांसीसी प्रदेशों का निपटारा करना तथा यूरोप में वास्तविक एवं स्थायी शक्ति-संतुलन की पुनर्स्थापना करना था।

2. वैधता का सिद्धांत, जिसके द्वारा क्रांति के पूर्व की स्थिति को पुनः बहाल किया जाना था। इसका उल्लेख पेरिस की प्रथम संधि में ही किया जा चुका था। इसके अनुसार फ्रांस की क्रांति के पहले की स्थिति को ध्यान में रखकर यूरोपीय देशों की प्रादेशिक सीमाएँ पुनर्गठित की गई तथा नेपोलियन द्वारा अपने राजसिंहासनों से वंचित शासी परिवारों को पुनर्स्थापित किया गया। इसके साथ ही नेपोलियन के द्वारा किए गए परिवर्तनों को अवैध घोषित कर दिया गया, तथा

3. विजयी देशों को पुरस्कार तथा पराजित देशों को दंड का सिद्धांत।

इन्हीं तीन सिद्धांतों ने वियना कांग्रेस का मार्ग निर्देशन किया।

वियना कांग्रेस के समक्ष तात्कालिक समस्या फ्रांस के विरुद्ध सुरक्षा का उचित प्रबंध करना था। इस विषय पर विजयी देशों के मत एक थे। इस संबंध में पहला निर्णय यह लिया गया कि फ्रांस के चारों ओर सशक्त देशों की एक दीवार खड़ी की जाए। मित्र राष्ट्रों ने उसकी पूर्वी सीमा पर तीन प्रहरी तैनात किए-1. उत्तर में नीदरलैण्ड, 2. मध्य में प्रशा एवं 3. दक्षिण में सर्डीनिया । बेल्जियम ऑस्ट्रिया का एक प्रांत था। इसे हॉलैण्ड के साथ संयुक्त कर नीदरलैण्ड नामक एक नए साम्राज्य का गठन किया गया, ताकि फ्रांस के विरुद्ध एक मजबूत दीवार खड़ी की जा सके। इसी प्रकार फ्रांस की उत्तर-पूर्वी सीमा पर पवित्र रोमन साम्राज्य के छोटे-छोटे धार्मिक राज्य थे। राइन नदी के तट पर अवस्थित इन राज्यों को प्रशा के साथ संयुक्त कर दिया गया ताकि फ्रांस की पूर्वी सीमा पर भी उसके विरुद्ध सशक्त प्रहरी को तैनात किया जा सके। फ्रांस की दक्षिण-पूर्वी सीमा पर जेनोआ का गणराज्य था। इसकी घाटियों से होकर फ्रांस की सेना कई बार इटली पहुँच गई थी। इसलिए इस दिशा में एक मजबूत अवरोध खड़ा करने के उद्देश्य से जेनोआ को सर्डीनिया के साथ संयुक्त कर नेपोलियन द्वारा अपदस्थ सर्डीनिया के राजा को पुनर्स्थापित किया गया। इस प्रकार, फ्रांस की पूर्वी सीमा पर अंतःस्थ राज्यों की एक दीवार खड़ी की गई ताकि भविष्य में फ्रांस के आक्रमणों का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया जा सके। इसके अतिरिक्त फ्रांस के विरुद्ध अतिरिक्त सुरक्षा के रूप में स्विट्जरलैण्ड को कैण्टनों के स्वतंत्र संघ के रूप में पुनर्स्थापित किया गया।

वियना कांग्रेस के समक्ष एक बहुत बड़ी समस्या थी, वारसा का ग्रैण्ड डची। इस राज्य का गठन नेपोलियन ने किया था। उसने प्रशा एवं ऑस्ट्रिया की पॉलिश आबादी वाले प्रदेशों को पृथक कर उन्हें एक स्वतंत्र राज्य के रूप में गठित किया था और इसका शासन सैक्सनी के राजा को सुपुर्द किया था। नेपोलियन के पतन के पश्चात् रूस संपूर्ण वारसा पर अपना अधिकार चाहता था। प्रशा वारसा में सम्मिलित अपने पॉलिश प्रदेशों को छोड़ देने के लिए तैयार था, यदि इसकी क्षतिपूर्ति उसे कहीं और कर दी जाती। उसकी दृष्टि सैक्सनी पर थी। वह अपने पॉलिश प्रदेशों के बदले सैक्सनी को पाना चाहता था।

रूस और प्रशा एक-दूसरे की माँगों से सहमत थे। उन दोनों ने इस संबंध में एक संधि भी कर ली थी, किंतु ऑस्ट्रिया, इंग्लैंड एवं फ्रांस, रूस एवं प्रशा की इन माँगों के विरुद्ध थे। पर मित्र राष्ट्रों के बीच आपस में

जो भी ईर्ष्या तथा प्रतिस्पर्धा रही हो, वे सभी नेपोलियन से समानरूप से घृणा करते थे और उससे हर हालत में मुक्त होना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने आपसी मतभेदों को अविलंब मिटा दिया और रूस को वारसा का अधिकांश भाग देने का निर्णय लिया। इसके साथ ही प्रशा को पॉसेन नामक प्रांत देने का निर्णय लिया गया और क्रैकाउ को एक स्वतंत्र नगर के रूप में स्थापित किया गया। सैक्सनी के राजा को पुनः सिंहासनारूढ़ करने का निर्णय लिया गया। ड्रेस्डेन एवं लिप्जिक नामक नगर उसके अधीन बने रहे, लेकिन उसे सैक्सनी का एक बड़ा भाग प्रशा को देना पड़ा। प्रशा को क्षतिपूर्ति स्वरूप राइन नदी के किनारे भी विस्तृत भू-भाग दिए गए। उसे स्वीडेन से पोमेरानिया भी मिला।

बाल्टिक प्रदेश में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए। फिनलैण्ड को रूस के साथ मिला दिया गया और इस नुकसान के लिए स्वीडेन को क्षतिपूर्ति स्वरूप नार्वे दिया गया जो उस समय डेनमार्क के अधीन था। डेनमार्क को इस क्षति की पूर्ति उत्तरी जर्मनी में कुछ प्रदेशों को देकर की गई।

केंद्रीय यूरोप में सबसे प्रमुख समस्या जर्मनी के पुनर्गठन की थी। जर्मनी में एक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना तत्काल संभव नहीं थी, क्योंकि फ्रांस के अतिरिक्त रूस भी एकीकृत जर्मनी के पक्ष में नहीं था। प्रशा और ऑस्ट्रिया की प्रतिद्वंदिता के कारण भी जर्मनी में एकीकृत राष्ट्रीय राज्य की स्थापना सहज संभव नहीं थी। इसलिए वियना कांग्रेस ने जर्मनी को 39 राज्यों का एक संघ बनाने का निर्णय लिया। इस संघ के लिए ऑस्ट्रिया की अध्यक्षता में एक संघीय डायट का प्रावधान किया गया जिसकी सदस्यता जर्मनी के विभिन्न शासकों द्वारा नियुक्त प्रतिनिधियों को प्रदान की गई।

वियना कांग्रेस द्वारा गठित जर्मन परिसंघ का कोई सदस्य संघ अथवा इसके किसी सदस्य के विरुद्ध किसी विदेशी शक्ति के साथ कोई संधि नहीं कर सकता था, किंतु वस्तुस्थिति यह थी कि यह संघ अत्यंत शिथिल था, जिसका प्रत्येक सदस्य अपने आंतरिक मामलों में पूर्णतः स्वतंत्र था। इसके साथ ही इस संघ के कई सदस्य राज्यों का शासन विदेशियों के हाथ में था। उदाहरणार्थ, श्लेसविग हॉलस्टीन तथा लक्जमबर्ग के ड्यूक क्रमशः डेनमार्क एवं नीदरलैण्ड के राजा थे। इसी प्रकार, हैनोवर का राजा इंग्लैंड का राजा थे। संघीय डायट के ये गैर जर्मन सदस्य प्रारंभ से ही एक कमजोर एवं विभाजित जर्मनी के पक्ष में थे। इसके अतिरिक्त ऑस्ट्रिया भी हमेशा ही इस बात के लिए सचेत था कि किसी भी हालत में जर्मनी में एक मजबूत तथा एकीकृत राज्य की स्थापना नहीं हो।

दक्षिणी यूरोप के प्रादेशिक पुनर्गठन में भी कुछ कठिनाइयाँ उपस्थित हुई। बेल्जियम ऑस्ट्रिया के अधीन था, किंतु वियना कांग्रेस ने बेल्जियम को हॉलैण्ड के साथ संयुक्त कर दिया। ऑस्ट्रिया को इस क्षति की पूर्ति उत्तरी इटली में लोम्बार्डी एवं वेनेशिया के रूप में सर्वाधिक संपन्न प्रांतों को देकर की गई। मध्य इटली में अवस्थित मोडेना एवं टस्कनी को पुनर्जीवित किया गया और इन डचियों का शासन हैब्सबर्ग परिवार के एक सदस्य को दिया गया। इसी प्रकार, परमा का शासन नेपोलियन की पत्नी, जो हैब्सबर्ग घराने से संबद्ध थी, के अधीन कर दिया गया। पोप को मध्य इटली में अवस्थित उसके सारे प्रदेश वापस कर दिए गए तथा नेपुल्स का राज्य इसके पुराने शासक फर्डिनेण्ड IV को सौंप दिया गया।

3.1.4. वियना समझौतों का विभिन्न शक्तियों पर प्रभाव

वियना समझौतों का विभिन्न देशों पर अलग-अलग प्रभाव पड़ा। फ्रांस को दंडस्वरूप मित्रराष्ट्रों को हरजाना देना पड़ा। मित्रराष्ट्रों की एक सेना फ्रांस में तैनात की गई। इसके रख-रखाव का भार फ्रांस को सौंपा

गया, लेकिन इससे फ्रांस को कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई क्योंकि नेपोलियन ने फ्रांस को अन्य किसी भी यूरोपीय देश की तुलना में आर्थिक रूप से सर्वाधिक संपन्न बना दिया था। फ्रांस को नेपोलियन द्वारा अपने सैन्य अभियानों में विभिन्न देशों से बलात प्राप्त की गई कलाकृतियों को भी लौटाने का निर्देश दिया गया।

यद्यपि फ्रांस को क्रांति के पूर्व की राजनैतिक सीमाओं में सीमित कर दिया गया, उसे विदेशों में अवस्थित अपने कई उपनिवेशों को रखने की अनुमति प्रदान की गई। इस कारण 1815 में उसके कुल प्रदेशों का क्षेत्रफल 1789 की तुलना में थोड़ा अधिक ही था। उसके कई उपनिवेश उसके पास सुरक्षित रहे, यद्यपि उसे उन सभी से वंचित किया जा सकता था। फ्रांस के प्रति मित्रराष्ट्रों ने यह उदारता इसलिए दिखाई, क्योंकि उन्हें आशंका थी कि कठोर शर्तों की स्थिति में लुई अपना राजसिंहासन सुरक्षित रखने में समर्थ नहीं हो सकेगा। मित्रराष्ट्रों की दृष्टि में एक सशक्त और सुदृढ़ फ्रांस यूरोप में शक्ति संतुलन के लिए भी आवश्यक था।

इंग्लैंड को नेपोलियन के विरुद्ध अपने प्रयासों के लिए पर्याप्त मुआवजा मिला। यूरोप में उसे हेलिगोलैण्ड और माल्टा प्राप्त हुआ तथा एड्रियाटिक सागर में उसे आयोनियन द्वीप समूह मिला। इंग्लैंड के औपनिवेशिक साम्राज्य में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। उसे फ्रांस से मॉरिशस , स्पेन से त्रिनिदाद और हॉलैण्ड से 'केप ऑफ गुड होप' प्राप्त हुआ। वस्तुतः वियना कांग्रेस में अन्य विजयी देशों की तुलना में इंग्लैंड ने सर्वाधिक प्रदेश प्राप्त किए।

रूस को वियना सम्मेलन से कई भूभाग प्राप्त हुए। उसने स्वीडेन से फिनलैण्ड प्राप्त किया, किंतु उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी, वारसा पर उसका अधिकार। इसके परिणामस्वरूप पश्चिम दिशा में उसका अभूतपूर्व प्रसार हुआ। अब यह यूरोप के मामलों में पहले से अधिक वजन के साथ हस्तक्षेप कर सकता था।

ऑस्ट्रिया ने बेल्जियम की क्षतिपूर्ति स्वरूप उत्तरी इटली में वेनेशिया एवं लोम्बार्डी प्राप्त किए। उसने बेवेरिया से टायरॉल प्राप्त किया तथा एड्रियाटिक के पूर्वी तट पर अवस्थित इल्लीरियन प्रदेशों पर अपना अधिकार स्थापित किया। इस प्रकार, ऑस्ट्रिया ने अपने दूरस्थ प्रदेश के बदले में ऐसे प्रदेश पाए जिसके फलस्वरूप मध्य यूरोप में उसकी शक्ति में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। उसे जर्मन परिसंघ का अध्यक्ष बनाया गया। इस संघ में ऐसे कई राज्य थे जो प्रशा से ईर्ष्या रखते थे। इस कारण ऑस्ट्रिया ने जर्मन परिसंघ पर अत्यंत सहजता से अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया।

प्रशा ने सैक्सनी एवं वेस्टफेलिया में कई भूभागों के अतिरिक्त राइन के किनारे भी कुछ भूखंड प्राप्त किए। उसका अपने उन पॉलिश प्रदेशों पर अधिकार बना रहा जो उसने पोलैंड के प्रथम दो विभाजनों में प्राप्त किया था, किंतु तृतीय विभाजन में प्राप्त पॉलिश प्रदेशों पर से उसका अधिकार समाप्त हो गया। वस्तुतः 1815 में प्रशा का प्रादेशिक विस्तार 1789 जितना ही था, किंतु उसके प्रदेशों की भौगोलिक स्थिति एवं उसकी जनसंख्या की प्रकृति में अंतर आ गया। 1789 में उसका उत्तर-पूर्वी जर्मनी पर अधिकार था, किंतु 1815 में उसने जर्मनी के पश्चिमोत्तर प्रदेशों पर अपना प्रभाव स्थापित किया। इसी प्रकार, उसने 1815 में पोलैंड के स्लावों को खो दिया और उनके बदले में राइनलैण्ड एवं सैक्सनी के जर्मनों को प्राप्त किया। राइनलैण्ड पर अधिकार होने से उसे औद्योगिक संसाधन सहज सुलभ हो गए और वह जर्मनी के सर्वाधिक समृद्ध राज्य के रूप में सामने आया।

वियना कांग्रेस में इटली के संबंध में महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। यह पहले ही तय किया जा चुका था कि ऑस्ट्रिया को बेल्जियम की क्षतिपूर्तिस्वरूप इटली में कुछ भू-भाग दिए जाएँगे और इटली के राज्यों में प्राचीन राजवंशों को पुनर्स्थापित किया जाएगा। वियना कांग्रेस ने ऑस्ट्रिया को इटली में अवस्थित सर्वाधिक

संपन्न एवं सैन्य दृष्टि से सर्वाधिक सशक्त प्रांत लोम्बार्डी एवं वेनेशिया प्रदान किए। अपनी इस नई भौगोलिक स्थिति से ऑस्ट्रिया संपूर्ण इतालवी प्रायद्वीप पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सकता था। ऑस्ट्रिया के लिए ऐसा कर पाना इसलिए भी सहज था, क्योंकि परमा का राज्य नेपोलियन की पत्नी को दिया गया और ऑस्ट्रिया के राजपरिवार से संबंधित राजकुमारों को मोडेना एवं टस्कनी में पुनर्स्थापित किया गया। वियना कांग्रेस ने इटली के राज्यों को एकीकृत करने का कोई प्रयास नहीं किया। मेटरनिख की प्रारंभ से ही यह नीति रही कि इटली मात्र स्वतंत्र राज्यों का एक समूह बना रहे। वियना कांग्रेस ने जर्मनी में भी राष्ट्रीय राज्य स्थापित करने का कोई प्रयास नहीं किया। इस सम्मेलन के बाद जर्मनी भी इटली की तरह मात्र एक भौगोलिक अभिव्यक्ति बना रहा।

3.1.5. वियना समझौतों की आलोचना

वियना कांग्रेस द्वारा संपन्न प्रादेशिक पुनर्गठन स्थायी सिद्ध नहीं हो सका। सम्मेलन में विजयी देशों के राजनयिकों ने यूरोपीय जनता की भावना की अवहेलना की। उन्होंने यूरोप का पुनर्गठन इस रूप में किया मानों वह उनकी व्यक्तिगत संपत्ति हो। उन्होंने उन सभी तत्वों की अनदेखी की जो समझौतों को स्थायी बना सकते थे। इसीलिए 1815 ई0 के पश्चात् यूरोप के कई देशों में क्रांतियाँ हुई, जिन्होंने वियना सम्मेलन द्वारा की गई गलतियों को दूर किया।

वस्तुतः वियना सममेलन के समझौते किसी उदात्त सिद्धांत के परिणाम नहीं थे। सम्मेलन में भाग ले रहे विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों ने यूरोप की जनता को प्रभावित करने के लिए 'सामाजिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण', 'यूरोप की राजनैतिक व्यवस्था का पुनरुत्थान', 'न्यायसंगत शक्ति विभाजन पर आधारित स्थायी शांति' जैसे मुहावरों का प्रयोग किया, लेकिन यूरोप की जनता को धोखा नहीं दिया जा सकता था। यूरोप की जनता ने विजयी देशों द्वारा विजित प्रदेशों की छीना-झपटी को स्पष्ट रूप से देखा। उसने देखा कि यूरोप के राजा, जो जनता के अधिकारों का सम्मान न करने के लिए नेपोलियन की निंदा करते थे, वियना में उसी तरह का व्यवहार कर रहे थे।

वियना में वैधता की बात फ्रांसीसी राजनयिक टेलीरैण्ड ने उठाई। इसके पीछे उसका उद्देश्य फ्रांस को प्रादेशिक लूटमार से बचाना था। वैधता की व्याख्या इस रूप में की गई कि किसी देश का शासनाध्यक्ष वही व्यक्ति बन सकता है जिसने दीर्घ अवधि तक उस पद का उपभोग किया हो और उस रूप में उसे यूरोपीय देशों ने मान्यता भी प्रदान किया हो। इस बात पर बल दिया गया कि क्रांति के पूर्व की स्थिति पुनः बहाल की जाए और सभी वैध शासकों को पुनर्स्थापित किया जाए। इसे इस तरह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार दीर्घ अवधि तक किसी वस्तु पर अधिकार से वह वस्तु किसी की संपत्ति हो जाती है, शासन का अधिकार भी किसी को उसी तरह प्राप्त होता है। यह निर्णय लिया गया कि यूरोप का प्रादेशिक समायोजन किया जाए और नेपोलियन के पूर्व यूरोपीय देशों की जो सीमाएँ थीं, उन्हें पुनर्निधारित किया जाए।

वैधता का सिद्धांत प्रतिक्रियावादी शासकों के हित में था। इसीलिए इस सिद्धांत को उन शासकों का भरपूर समर्थन मिला। इस सिद्धांत का अनुसरण करते हुए बूर्बों राजवंश को फ्रांस, स्पेन तथा नेपुल्स में तथा ऑरेंज राजवंश को हॉलैण्ड में पुनः स्थापित किया गया। इसी सिद्धांत के अनुसार, पोप को मध्य इटली में अवस्थित उसके सारे प्रदेश वापस कर दिए गए। इसी प्रकार जर्मन राजाओं को उनके सभी प्रदेश वापस कर

दिए गए जिन्हें नेपोलियन ने राइन महासंघ में सम्मिलित कर लिया था। स्विस महासंघ को भी पुनर्स्थापित किया गया और विजयी देशों द्वारा स्विट्जरलैण्ड की तटस्थता सुनिश्चित की गई।

किंतु, वैधता का यही सिद्धांत वियना कांग्रेस में कई बार जान बूझकर नजरअंदाज कर दिया गया। ऐसा प्रायः तब हुआ जब विजयी देशों को क्षतिपूर्ति देने की आवश्यकता महसूस की गई। उदाहरणस्वरूप, नॉर्वे को डेनमार्क से अलग कर दिया गया और उसे स्वीडेन को क्षतिपूर्ति स्वरूप इसलिए दे दिया गया, क्योंकि स्वीडेन ने रूस को फिनलैण्ड तथा प्रशा को स्वीडिश पोमेरेनिया दिया था। इस प्रकार डेनमार्क को नेपोलियन का साथ देने के लिए दंडित किया गया और स्वीडेन को मित्रराष्ट्रों का समर्थन करने के लिए पुरस्कृत किया गया। इसी प्रकार, वैधता का सिद्धांत वेनिस एवं जेनोआ जैसे गणराज्यों पर लागू नहीं किया गया। इन्हें इसलिए समाप्त कर दिया गया, क्योंकि फ्रांस के विरुद्ध उत्तरी इटली की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए ऐसा करना आवश्यक था।

फ्रांस की क्रांति के परिणामस्वरूप संपूर्ण यूरोप में राष्ट्रीयता की भावना का खूब प्रचास्प्रसार हुआ था। किंतु वियना में एकत्रित विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों ने सिर्फ शक्ति संतुलन एवं वंशगत हितों को ध्यान में रखा और यूरोप की जनता की भावना की उन्होंने पूरी तरह उपेक्षा की। यही कारण था कि वियना सम्मेलन में जर्मन परिसंघ के विभिन्न राजाओं को सर्वशक्तिमान बना दिया गया और इटली में ऑस्ट्रिया का प्रभुत्व स्थापित किया गया। इसी प्रकार बेल्जियम को हॉलैण्ड तथा नॉर्वे को स्वीडेन के साथ संयुक्त कर राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूरी तरह अवहेलना की गई।

वस्तुतः वियना कांग्रेस के विरुद्ध सबसे मुख्य आरोप यही लगाया जाता है कि इसके द्वारा संपन्न यूरोप के प्रादेशिक पुनर्गठन में जर्मनी एवं इटली को विभाजित रखकर, पोलैंड को विघटित करके, बेल्जियम एवं हॉलैण्ड को संयुक्त करके तथा नॉर्वे को स्वीडेन के साथ संलग्न करके राष्ट्रवाद की पूरी तरह उपेक्षा की गई। भविष्य में इटली एवं जर्मनी का एकीकरण हुआ। एक सदी के बाद पोलैंड को भी एकीकृत किया गया। इसी प्रकार, 1830 में बेल्जियम को हॉलैण्ड तथा 1905 में नॉर्वे को स्वीडेन से पृथक किया गया। इस प्रकार यह कहना गलत नहीं है कि एक तरह से 1815 ई0 के बाद का यूरोपीय इतिहास वियना कांग्रेस द्वारा संपन्न कार्यों को व्यर्थ करने का इतिहास रहा है।

फिर भी, वियना कांग्रेस के विरुद्ध इन सारी आलोचनाओं के बावजूद यह निर्विवाद है कि इस सम्मेलन में संपन्न समझौतों में भविष्य में घटित होनेवाली कई महत्वपूर्ण घटनाओं के बीज निहित थे। यद्यपि सम्मेलन के अधिकांश कार्य प्रतिक्रियावादी थे, इसके द्वारा संपन्न प्रादेशिक पुनर्गठनों के दूरगामी परिणाम निकले। उदाहरणस्वरूप, जेनोआ के मिलने से सर्डीनिया का राज्य अधिक सुदृढ़ हो गया। इससे सेवाय राजवंश को इटली के द्वीप समूहों के बीच एकता स्थापित करने की प्रेरणा मिली। इस प्रकार, वियना कांग्रेस द्वारा अनजाने में इटली के एकीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया। इसी प्रकार, प्रशा द्वारा राइन के किनारे अवस्थित प्रदेशों का अधिग्रहण जर्मनी के प्रशाईकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। इसके पश्चात् ऑस्ट्रिया के स्थान पर प्रशा ने फ्रांस के विरुद्ध जर्मनी का नेतृत्व किया। इसी के बाद जर्मनी से ऑस्ट्रिया को निष्कासित कर दिया गया और प्रशा के नेतृत्व में जर्मनी का एकीकरण हुआ। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इटली एवं जर्मनी के एकीकरण के बीज वियना सम्मेलन के कार्यों में निहित थे।

निःसंदेह, वियना समझौतों के सुरक्षा की जिम्मेवारी सामूहिक रूप से सभी विजयी देशों की थी, किंतु यूरोप की शांति एवं सुरक्षा तब तक सुनिश्चित नहीं की जा सकती थी जब तक किसी अंतरराष्ट्रीय संगठन की

स्थापना नहीं हो जाती। इस संबंध में वियना सम्मेलन की समाप्ति के पश्चात् यूरोपीय देशों के समक्ष दो योजनाएँ रखी गईं इनमें पहली योजना रूस के जार अलेक्जैण्डर द्वारा समर्थित पवित्र संधि थी। यह संधि ईसाई धर्म को लोक जीवन में लाने का एक प्रयास था, किंतु जार के अतिरिक्त किसी अन्य देश ने इसे गंभीरता से नहीं लिया। दूसरी योजना चतुर्राष्ट्र संधि पर आधारित यूरोपीय कन्सर्ट की थी। यह संधि नवबंर 1815 में रूस, प्रशा, ऑस्ट्रिया एवं इंग्लैंड के बीच संपन्न हुई। इसके द्वारा यूरोपीय कन्सर्ट की स्थापना की गई और यह तय किया गया कि मित्रराष्ट्र यूरोप की शांति-व्यवस्था एवं आपसी हितों पर विचार-विमर्श करने के लिए समय-समय पर सम्मेलनों का आयोजन करते रहेंगे।

वियना में एकत्रित राजनयिकों का उद्देश्य यूरोप में शांति एवं स्थायित्व को सुनिश्चित करना था। पिछले पच्चीस वर्षों से यूरोप की जनता युद्धों एवं क्रांतियों से त्रस्त थी, लेकिन 1815 के वियना सम्मेलन के बाद लगभग आधी सदी तक यूरोप में कोई बड़ा युद्ध नहीं हुआ और शांति बनी रही। इस दृष्टि से वियना सम्मेलन को एक सफल सम्मेलन माना जाना असंगत नहीं है। इसके साथ ही, वियना कांग्रेस ने यूरोप में एक उत्कृष्ट शक्ति-संतुलन की स्थापना की। तभी से शक्ति-संतुलन का यह सिद्धांत अंतरराष्ट्रीय संबंधों का मूल आधार रहा है। पिछले दो दशकों तक संपूर्ण यूरोप में फ्रांस के रूप में एक शक्ति का प्रभुत्व बना रहा था। वियना कांग्रेस ने यूरोप का नियंत्रण बड़ी शक्तियों के हाथों में देकर यूरोपीय कन्सर्ट की स्थापना की जो कई अर्थों में राष्ट्रसंघ का पूर्वगामी साबित हुआ। इसलिए कहा जा सकता है कि वियना कांग्रेस द्वारा निर्मित नींव पर ही उन्नीसवीं सदी के यूरोप का निर्माण हुआ।

3.1.6. मेटरनिख व्यवस्था (1815-1848)

यूरोपीय राजनीति में अपने प्रभुत्व के कारण 1815 ई0 से 1848 ई0 तक की अवधि को मेटरनिख का युग माना जाता है। इस अवधि में मेटरनिख का सर्वप्रमुख उद्देश्य वियना कांग्रेस द्वारा यूरोप में स्थापित राज्य-व्यवस्था को बनाए रखना था। प्रारंभ से ही मेटरनिख के संस्कार क्रांतिकारी भावनाओं के विरुद्ध थे। वह क्रांति के विचारों को एक संक्रामक रोग मानता था। उसे प्रजातांत्रिक विचार एक ज्वालामुखी की भाँति प्रतीत होते थे और यही कारण है कि उसने जीवन पर्यंत निरंकुश एवं राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्था का पक्ष लिया।

1809 ई0 में ऑस्ट्रिया का चान्सलर बनने के पश्चात् मेटरनिख ने अपनी प्रतिक्रियावादी नीति का प्रयोग प्रारंभ किया। ऑस्ट्रिया के साम्राज्य में विभिन्न राष्ट्रिकों का निवास था। उनकी अपनी-अपनी भाषा तथा संस्कृति थी। समाज तथा अर्थव्यवस्था में सामंतों एवं पादरियों को उच्च स्थान प्राप्त थे जबकि कृषकों एवं श्रमिकों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। ऐसी स्थिति में मेटरनिख ने अपनी नीतियों को ऐसा रूप दिया ताकि राष्ट्रवाद के बीज पल्लवित एवं पुष्पित न हो सकें और पुरातन व्यवस्था कायम रहे।

मेटरनिख जानता था कि यूरोप के देशों में राष्ट्रवादी एवं उदारवादी आंदोलनों की आधारशिला रखी जा चुकी थी जिनका उद्देश्य शासकों को एक उदार एवं राष्ट्रीय संविधान देने हेतु बाध्य करना था। जर्मनी में बुद्धिजीवियों एवं इटली में कारबोनरी नाम की एक संस्था के नेतृत्व में सशक्त जन आंदोलन जन्म ले चुके थे। ऑस्ट्रिया का साम्राज्य कई राष्ट्रिकों का निवास स्थान था। इसलिए यूरोप में कहीं भी एक राष्ट्रीय एवं उदार संविधान जारी करने का सीधा असर ऑस्ट्रिया पर भी पड़ता। यही कारण है कि मेटरनिख किसी भी कीमत पर ऑस्ट्रिया में क्रांतिकारी भावनाओं का प्रसार नहीं होने देना चाहता था। उसने प्रशा के साथ मिलकर जर्मनी में

भीषण दमनात्मक कार्रवाइयाँ की। 1819 की कार्ल्सबैंड घोषणा के परिणामस्वरूप उसने जर्मनी में उदारवादी तत्वों के विरुद्ध सफलतापूर्वक विजय पाई।

वियना कांग्रेस की समाप्ति के पश्चात् उसके निर्णयों को स्थायी रखने तथा यूरोप में उदारवादी तत्वों का दमन करने हेतु उसने यूरोपीय कन्सर्ट का नेतृत्व किया। अपनी वैदेशिक नीति में उसने हमेशा राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्था का पक्ष लिया। यदि यूरोप के किसी भी भाग में राजतंत्रात्मक व्यवस्था के विरुद्ध जन आंदोलन होते तो उन्हें दबाना वह अपना परम कर्तव्य समझता था।

मेटरनिख व्यवस्था एक दीर्घ अवधि तक कायम रही और यूरोप में शांति बनी रही। परंतु यह शांति ऊपरी थी। अंदर ही अंदर संपूर्ण मध्य यूरोप में जन आंदोलनों की अग्नि सुलग रही थी। मेटरनिख की प्रतिक्रियात्मक नीति से सभी त्रस्त थे। 1848 ई0 में ऑस्ट्रिया में उसके विरुद्ध प्रदर्शन होने लगे। पार्लियामेंट ने भी उसका विरोध करना प्रारंभ कर दिया। अन्य कोई विकल्प न देखकर मेटरनिख को अपने पद का त्याग करना पड़ा। वह इंग्लैंड भाग गया जहाँ रहकर उन तत्वों का अंत देखता रहा जिन्होंने राष्ट्रवाद, समानता एवं उदारवाद के सिद्धांतों से संघर्ष किया था। सच ही कहा गया है कि मेटरनिख का पतन एक व्यक्ति का पतन नहीं, बल्कि उस सारी व्यवस्था का पतन था जिसने एक लंबे समय तक प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था को अवरुद्ध कर रखा था।

3.1.7. सारांश

वियना कांग्रेस यूरोपीय देशों का एक सम्मेलन था जिसका उद्देश्य नेपोलियन के पतन के पश्चात् यूरोप का प्रादेशिक पुनर्निर्माण था। इस कांग्रेस में यूरोप के सभी देशों ने भाग लिया, किंतु महत्वपूर्ण निर्णय पाँच बड़े देशों-इंग्लैंड, रूस, ऑस्ट्रिया, प्रशा एवं फ्रांस के द्वारा लिए गए। इस सम्मेलन द्वारा फ्रांस की क्रांति के पूर्व की स्थिति को ध्यान में रखकर यूरोपीय देशों की प्रादेशिक सीमाएँ पुनर्निर्धारित की गईं और नेपोलियन द्वारा अपने राजसिंहासनों से वंचित राज परिवारों को पुनर्स्थापित किया गया। इसके अतिरिक्त इस सम्मेलन ने फ्रांस के विरुद्ध उचित सुरक्षा का प्रबंध किया। वियना में एकत्रित राजनयिकों का मुख्य उद्देश्य यूरोप में शांति एवं स्थायित्व को पुनः बहाल करना था। पिछले पच्चीस वर्षों से यूरोप युद्धों एवं क्रांतियों से जूझता रहा था। लेकिन 1815 के वियना सम्मेलन के बाद लगभग पचास वर्षों तक यूरोप में कोई बड़ा युद्ध नहीं हुआ। कांग्रेस ने यूरोप का नियंत्रण सामूहिक रूप से बड़ी शक्तियों के हाथ में देकर अगले कई दशकों के लिए यूरोप की शांति एवं व्यवस्था को सुनिश्चित किया।

3.1.8. अभ्यास के प्रश्न

1. वियना समझौतों के प्रावधानों सहित परवर्ती यूरोप के इतिहास पर इसके प्रभावों का वर्णन करें।
2. 'वियना कांग्रेस का आयोजन विजयी देशों द्वारा विजित प्रदेशों के पुनर्वितरण के उद्देश्य से किया गया था।' विवेचन करें।
3. मेटरनिख व्यवस्था का आलोचनात्मक परीक्षण करें।

3.1.9. संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. गुप्त, पार्थसारथि (1993), यूरोप का इतिहास, दिल्ली, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
2. थॉमसन, डेविड (1978), यूरोप सिंस नेपोलियन, ग्रेट ब्रिटन, पेंग्विन बुक्स
3. हेजेन, चार्ल्स, डाउनर (1977), मॉडर्न यूरोप, नई दिल्ली, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि0
4. केटेलबी, सी0 डी0 एम0 (1988), ए हिस्ट्री ऑफ माडर्न टाइम्स, कलकत्ता, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
5. तारापोरवाला, वाई0 जे0 ए0 (प्रथम संस्करण), यूरोपियन हिस्ट्री, पटना यूनिवर्सिटी, पटना